मीमांसा

हिंदी वार्षिक पत्रिका 2013

राष्ट्रीय कोशिका विज्ञान केन्द्र, पुणे 411 007

मीमांसा का सामान्य अर्थ समीक्षा, विश्लेषण तथा तर्कों से जिज्ञासा एवं अपने मतों को अभिव्यक्त करना। पश्चिमी विचारक एरिस्टोटल ने 'पोलिटिक्स' में लिखा है कि-'मनुष्य अपनी सभ्यता के कारण ही अन्य प्राणियों से श्रेष्ठतम है, अगर मनुष्यजाति को नियमों और कानून से अलग कर दिया जाए तो वो पृथ्वी पर का सबसे बदतर जीव बन जाएगा। मनुष्य की महत्त्वाकांक्षा और आत्मकेन्द्री स्वभाव ही उस पर लगे नियंत्रण का कारण है'। पर क्या यही मनुष्य स्वभाव है? नहीं। मानवमात्र की सोच और समझ का एक पहलू वह भी है जिसे दुनिया नहीं जानती, जिसे वह खुद भी नहीं जानता, जो पूर्णतया प्रकृति की देन है और जिसे बंधन में नहीं रखा जा सकता, और जिसमें सभी जीवों के प्रति समभाव और प्रगति का विचार है और जिसे इतिहास में बुद्ध, अशोक या जीसस क्राइस्ट के नाम से जाना जाता है। खुद के अंदर के इसी आयाम की 'मीमांसा' में इस सफर की हमने शुरूआत की है।

'मीमांसा' – हिन्दी पत्रिका

प्रथम अंक, वर्ष-2013

प्रमुख संपादिका - डॉ. शैलजा सिंह

सह संपादक - श्री. रामेश्वर नेमा

सह संपादिका - श्रीमती स्मिता खडकीकर

फोटोग्राफी सौजन्य - सुश्रि. सोनाली शिंदे
श्री. फाल्गुनी रथ

विशेष सहयोग - डॉ. ज्योति राव
सुश्रि. मेघल देसाई

मुखपृष्ठ सौजन्य - डॉ. शैलजा सिंह

अनुक्रमणिका

- **संदेश** 07
- **संपादकीय** 09
- **प्रा. माधव गाडगीळ से भेंटवार्ता** 11
- **विज्ञानवाणी**
  - विषमज्वर/ मलेरिया 13
    - डॉ. जी. सी. मिश्र एवं डॉ. प्रकाश देशपांडे
- **आकाशवाणी से प्रसारित रेडिओ वार्ताओं का हिंदी रूपांतर**
  - क्ष-किरण विवर्तन के सौ साल 17
    - डॉ. शेखर मांडे
  - प्रेरित बहुप्रभावी स्तम्भ (रस्टेम) कोशिका (आयपीएस) 20
    - डॉ. अंजली शिरास, डॉ. दीपा सुब्रमण्यम
  - मानवी मायक्रोबायोम 22
    - डॉ. योगेश शौचे, डॉ. शर्मिला मांडे - टीसीएस
- **विज्ञान के क्षेत्र में महिलाओंका योगदान** 24
  - डॉ. शैलजा सिंह एवं श्रीमती विरश्री जामदार
  - इरावती कर्वे 25
  - कमला सोहनी 27
  - अण्णामणी 29
  - आसिमा चैटर्जी 31
  - एदावलेथ कक्कट जानकी अम्मल 33
  - दर्शन रंगनाथन 35
  - अजीब बहनें 37
- **कोशिका विज्ञान का एक नया आयाम** 40
  - सुश्रि. मेघल देसाई
- **काव्यामृत**
  - सूक्ष्मजीव वन्दना 42
    - डॉ. ओमप्रकाश शर्मा
  - माँ 43
    - सुश्रि. श्रुति शर्मा
  - मेरी कविताएँ 44
    - डॉ. पूजा गुप्ता

- शरदऋतु 47
  - सुश्रि. श्रुति शर्मा
- द्वंद्व 48
  - श्री. अमन शर्मा
- दहेज प्रथा 49
  - सुश्रि. श्रुति शर्मा

◆ **साहित्य अमृत**

- नारी सशक्तिकरण-एक सार्थक प्रयास 50
  - सुश्रि. निधि चौधरी
- मृगतृष्णा (एक लघुकथा) 52
  - श्री. एस. आय. सिंदगी
- दुनिया गोल है - गब्बर की खुली पोल है। 53
  - सुश्रि. सोनाली सुधाकर शिंदे

◆ **हिन्दी निबंध प्रतियोगिताओं के पुरस्कृत निबंध**

- ग्लोबल वार्मिंग-संकट कल का 54
  - श्री. नितीन सोनावणे
- सकारात्मक सोच की कला 56
  - सुश्रि. निधि चौधरी
- ग्लोबल वार्मिंग-संकट कल का 58
  - सुश्रि. पायल रानडे
- बालशिक्षा का अधिकार 60
  - डॉ. ओमप्रकाश शर्मा

◆ **सूचनात्मक लेख**

- पुस्तकालय एवं समाज 62
  - श्री. रामेश्वर नेमा
- संस्था में राजभाषा कार्यान्वयन 63
  - श्रीमती. स्मिता खडकीकर

◆ **पहेलियाँ**

- मॅजिकल स्क्वेअर 65
  - श्री. एस. आय सिंदगी
- पहेलियाँ 66
  - सुश्रि. मिल्सी मोल जे. पी

◆ **झलकियाँ** 67

संदेश

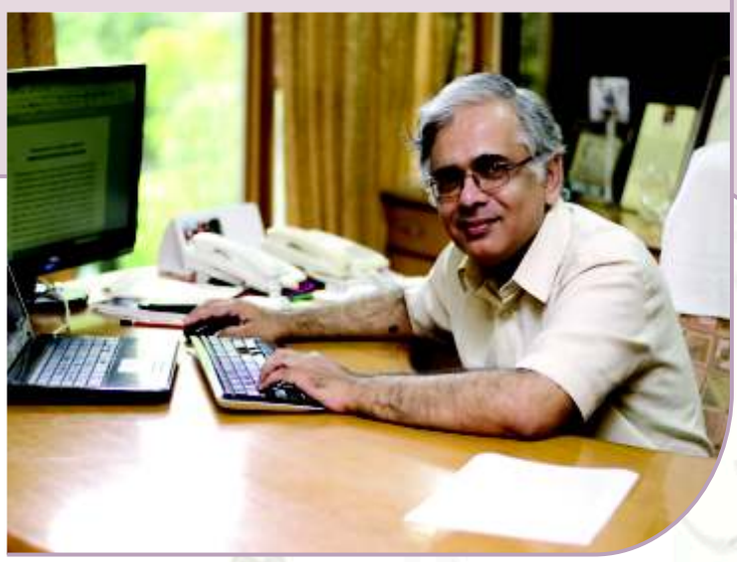

डॉ. शेखर चिं मांडे, पीएच.डी
निदेशक

यह मेरे लिए अत्यंत हर्ष का विषय है कि, जीवविज्ञान के विविध क्षेत्रों में अनुसंधान के साथ-साथ, राजभाषा नीति का पालन करने हेतु एवं उसके प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए, राष्ट्रीय कोशिका विज्ञान केन्द्र इस वर्ष से अपनी हिन्दी पत्रिका 'मीमांसा' प्रकाशित करने जा रहा है। विज्ञान जगत के विषयों को जनमानस तक पहुँचाने के साथ-साथ, संस्था के वैज्ञानिक, अधिकारी, कर्मचारी एवं शोधछात्र अपनी सृजनशीलता एवं साहित्यिक प्रतिभा को इस पत्रिका के माध्यम से प्रतिबिंबित करेंगे।

मुझे आशा एवं विश्वास है कि, यह अंक पाठकों के लिए शिक्षाप्रद, ज्ञानवर्धक एवं रोचक होगा। इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों से प्रेरणा लेकर, भविष्य में भी संस्था के सभी वैज्ञानिक, अधिकारी एवं कर्मचारी गण संस्था में चल रहें हिंदी कार्यान्वयन एवं हिंदी पत्रिका प्रकाशन के लिए अपना संपूर्ण सहयोग प्रदान करेंगे।

जिन्होंने इस पत्रिका में अपना योगदान दिया है एवं पत्रिका प्रकाशन में सम्मिलित सभी के प्रयासों को मैं हार्दिक बधाई देता हूँ। इसके साथ ही मीमांसा के सफल प्रकाशन की भी कामना करता हूँ।

शुभकामनाओं सहित,

शेखर चिं मांडे

सम्पादकीय

प्रिय मित्रों और सहकर्मियों,

अत्यंत हर्ष का विषय है कि, हमारी संस्था, राष्ट्रीय कोशिका विज्ञान केन्द्र द्वारा सन 2013 से प्रतिवर्ष 'मीमांसा' नामक पत्रिका का प्रकाशन होगा। पत्रिका का यह पहला संस्करण है। इसके प्रकाशन में संस्था के वैज्ञानिक वृंद, अन्य कर्मचारी, एवं उनके साथ ही विद्यार्थियों का अपूर्व योगदान रहा है।

यह मेरा विश्वास है कि,'मीमांसा' पत्रिका आप सभी के लिए मनोरंजक, मार्गदर्शक, ज्ञानवर्धक, उत्साहवर्धक एवं दिशा निर्देशक साबित होगी। इसमें संग्रहित लेख, निबंध, संस्मरण आदि को हमने पत्रिकारूपी माला में पिरोने का अथक प्रयास किया है। ये पत्रिका विज्ञान उद्देश्यों, राष्ट्रीय विज्ञान केन्द्र एवं संगठन को दर्शाती है। भाषाको रोचक एवं सहज रखते हुए विज्ञान और उससे संबंधित समाजशास्त्रीय पक्षोंका विवेचन पूर्ण रूप से बोधगाम्य रूप में प्रस्तुत किया गया है। पत्रिका में विभिन्न छायाचित्रों, आरेखियाचित्रों के माध्यम से पाठ्य सामग्री को सरल एवं रोचक रूप में स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

कार्यालयीन कामकाज में राजभाषा का उपयोग एवं हिंदी पत्रिका प्रकाशन के कार्य में अपना बहुमोल मार्गदर्शन एवं सहयोग प्रदान करने के लिए संस्थाा के निदेशक महोदय के प्रति हम संपादकीय मंडल अत्यंत आभारी हैं। इस पत्रिका में लेख, कविता आदि के रूप में जिन्होंने योगदान दिया उनके प्रति भी हम हार्दिक आभारी हैं। गतवर्ष हिंदी सप्ताह समारोह को दौरान आयोजित हिंदी निबंध प्रतियोगिता में पुरस्कार प्राप्त करने वाले पहले चार निबंधों को हमने इसमें शामिल किया है। आशा है कि, इस पत्रिका के लिए प्रतिवर्ष हमें ऐसा ही सराहनीय सहयोग प्राप्त होगा और इसे अधिक उपयोगी एवं रोचक बनाने के लिए हमें आपके सुझावों की प्रतिक्षा रहेगी।

डॉ. शैलजा सिंह
प्रमुख संपादिका

प्रा. माधव गाडगीऴ से भेंटवार्ता

भेंटकर्ता - प्रा. माधव गाडगीऴ

साक्षात्कर्ता - डॉ. शेखर मांडे, डॉ. शैलजा सिंह

1. पर्यावरण सुरक्षा एवं संरक्षण के लिए आपने एक योद्धा के रूप में बहुत लंबी दूरी तय की है। पर्यावरणविज्ञान का यह अनोखा रास्ता चुनने का आपका अपना फैसला था या इसे चुनने के लिए अंदर से कोई प्रेरणा आप में जागृत हुई?

प्रा. माधव गाडगीऴ- मेरे पिताजी को प्रकृति और पर्यावरण के बारे में आस्था थी। हमारा मकान पहाड़ियों के बिलकुल पास में ही था। मेरे पिताजी को प्रकृति निरीक्षण में काफी रूचि थी। सुविख्यात पक्षीनिरीक्षक सलीम अली से मेरे पिताजी की जान-पहचान थी। प्रायः प्रकृति, पर्यावरण इन विषयों पर चर्चाएँ होती थी। इसलिए बचपन से ही मुझे भी इस विषय में रूचि लगने लगी। जीवविज्ञान विषय में मैंने मेरी स्नातकोत्तर उपाधि हासिल की। तत्पश्चात पर्यावरणशास्त्र इस विषय में पीएच.डी करने के लिए मैंने हार्वर्ड विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। कई लोगों ने मुझे समझाने की कोशिश की कि क्यों न तुम वॉटसन जैसे मॉलेक्युलर बायोलोजिस्ट के पास पीएच.डी करते। यह 1965 साल था। उसके पहलेही दो- तीन साल अमरिका में रशियल कार्सेन के 'सायलेन्ट स्प्रिन्ग' इस किताब की वजह पर्यावरण के प्रति जागृति पैदा हुई थी। हार्वर्ड में कई लोगों का अभिप्राय था की यह हवा चार पास सालों में खतम हो जायेगी। इस विज्ञान में पीएच.डी करना पागलपन हैं। मगर मैंने यह बिलकुल नही माना । मुझे पर्यावरणशास्त्र में ही अभिरूचि होने के कारण मैंने इसी विषय में पीएच.डी करना उचित समझा।

2. आप 'पुणेरी' हैं और पहले पुणे को 'पेन्शनर के स्वर्ग' के रूप में जाना जाता था। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में बहुत कुछ परिवर्तन सामने आए। इन परिवर्तनों की वजह से पुणे में कुछ बदलाव आए हैं?

प्रा. माधव गाडगीऴ- पुणे की जनसंख्या दिन-ब-दिन बढ़ रही है। उसी वजह से शहर में भीड़ बढ़ रही है और पुणे के आसपास की पहाड़ियों पर बिल्डींग्ज और भवननिर्माण के काम भी बढ़ गए है। इसी के कारण पुणे शहर का स्वरूप बदल गया है। पुणे पहले जैसा रमणीय नहीं रहा है। लेकिन ह्रास के साथ-साथ कुछ अच्छे परिवर्तन भी दिखाई दे रहे है। पहाड़ियों पर रचना निर्माण का काम न हो इसलिए 'टेकड़ी बचाव अभियान' शुरू किया गया है। इस अभियान में मैं भी थोड़ा-बहुत योगदान करता हूँ। स्थानीय लोगों के प्रयत्नों से पहाड़ियों पर मोरों को संरक्षण दिया जा रहा है, जिसके परिणामस्वरूप मोरों की संख्या में वृद्धि पाई गई है।

3. हवामान बदलावों के बारे में आप क्या कहना चाहतें हैं? क्या ये मानव-निर्मित है या ग्रहों की दीर्घावधि का प्राकृतिक चक्र है?

प्रा. माधव गाडगीऴ- इसके लिए हमें कोट्यवधी वर्षों का विचार करना पड़ेगा। भारत में भी कई सहस्र वर्ष पहले कई हिस्सों में पूरा बर्फ का आवरण था। पिछले 50 वर्षों में तेजी से जनसंख्या बढ़ गई है। उसके साथ आर्थिक व्यवहारोंकी गति भी बढ गयी हैं। प्रकृति चक्र में वृद्धि के साथ-साथ मानव के हस्तक्षेप की वजह से हवामान में परिवर्तन दिखाई देता है। बड़े-बड़े शहरों के लोगों के पास पैसा बहुत है, इसलिए उनकी कामना होती है कि पहाड़ी क्षेत्र में या प्राकृतिक वातावरण में सेकंड होम या होटल्स हो। इसी वजह से जंगल, वन एवं छोटी पहाड़ियों पर रचना निर्मिति हेतु आक्रमण हो रहे है, यही कारण है कि प्राकृतिक स्रोत नष्ट होते जा रहे है।

4. पर्यावरण जागरूकता के बारे में भारत जैसे विकसनशील देश और राष्ट्रीय स्तर पर विकसित देश, व्यक्तिगत और सामाजिक स्तर पर कौनसी समानताएँ या फरक दिखाई देतें हैं?

प्रा. माधव गाडगीऴ- कौनसा भी समुदाय जैसा विकसित देशोंका - समांगी (होमोजिनीअस) नहीं होता। डेनमार्क, स्वीडन, नॉर्वे जैसे स्कॅन्डीनेवीयन देश प्रकृति का सही-सही पालन-पोषण कर रहे हैं। इन देशों ने प्रकृति को ठीक तरह से संभाला है। इतनी जागरूकता तो इंग्लैड, अमरीका में भी नहीं है। विकसित और विकसनशील देशों में काफी फरक होता है। भारत एक विकसनशील देश है जहाँ कई प्रकार की विविधताएँ पाई जाती है। हमारे देश में भी प्रकृति का संरक्षण किया जाता है। जैसे पुणे जिले में और पश्चिम घाट के कई इलाकोंमें कई पहाड़ियों पर प्राचीन काल से ही देवी-देवताओं की उपस्थिती मानी गयी है । तो ऐसे वनों एवं पहाड़ियों को देवी-देवताओं के वन या पहाड़ियाँ माना जाता है और ऐसी जगहों को स्थानीय लोग ही धार्मिक, सांस्कृतिक परंपराओं की मदद से संरक्षित करते है। ऐसे क्षेत्रों पर प्रकृति में हस्तक्षेप आदि के लिए मनाई की जाती है।

5. भारत के संदर्भ में कौनसे पर्यावरण संबंधित मुद्दे हैं?

प्रा. माधव गाडगीळ- हमारे देश में प्रजातंत्र की वजह से प्रकृति संरक्षण के अच्छे कानून बन गए है। कानून पालन करने की जिम्मेदारी समाज में रहने वाले लोगों की होती है। रासायनीक कारखानों की वजह से जल, वायु आदि प्रकार के प्रदूषणों का सामना हमें करना पड़ता है। कानून के मुताबिक इस प्रकार के प्रदूषण 30 साल पहले ही रोके जाने चाहिए थे। इन प्रदूषणों की वजह से खेती और मछलियों का भारी तौर पर नुकसान होता है। पर्यावरण का ठीक तरह से संरक्षण के लिए कानून बनाए गए है जिसका अनुपालन करना हर एक जागरूक नागरिक का कर्तव्य है।

6. बढ़ती हुई आबादी के साथ अनाज की पैदास एवं आवास के लिए जमीन की बढ़ती हुई जरूरत नजर आई है। इसके परिणामस्वरूप वन्य क्षेत्र कम होते जा रहा है। इस कठिन समस्या का निरूपण कैसे किया जाए?

प्रा. माधव गाडगीळ- केवल बढ़ती आबादी ही नहीं उपभोक्ता संस्कृति बढ़ना यह पर्यावरणके विध्वंस का मूल कारण है । लोगों के पास पैसा बढ़ने का कारण, उसका संचय सेकंड होम, रिसॉर्ट्स, होटल्स आदि करने की योजनाएँ बनने लगी। ये सेकंड होम, रिसॉर्ट्स, होटेल्स का प्रकृति के सानिध्य में निर्माण की कल्पना वृद्धिंगत हो गई। परिणामस्वरूप पहाडियों, वन्य क्षेत्रों पर दबाव आने लगा। ऐसे निर्माणों का स्थानीय लोगों को ही कानून की मदद लेकर विरोध करना चाहिए। ऐसा प्रयोग पुणें में 'टेकड़ी बचाव अभियान' के अंतर्गत किया जा रहा है।

हमारे देश में प्रजातंत्र की वजह से प्रकृति संरक्षण के अच्छे कानून बन गए है। कानून पालन करने की जिम्मेदारी समाज में रहने वाले लोगों की होती है।

7. क्या आपको लगता है कि, नजदीक के पहाड़ी क्षेत्रों में बढ़ते हुए रचना निर्माण अधिक्रमणों की वजह से केदारनाथ, उत्तराखंड में हाल ही में बादलों के फटने की आपत्ति निर्माण हुई?

प्रा. माधव गाडगीळ- बादलों का फटना और जोरोंकी बारिश जैसे अकस्मात तो पुराने कालोंसे होते हुए आए है । आजकी आपत्ति का कारण रचना निर्माण अधिक्रमण ही है। मंदाकिनी नदीमें पहले खेती होती थी, कभी भी मकान नही थे। दस- बारह सालों मे एकाद बार बाढ से खेती का नुकसान होता था, मगर लोगों के लिये ये कोई बडा संकट नही था। मगर पिछले दस सालों में मंदाकिनी नदी के पात्र में बडे पैमाने में अवैध रचनाएं, जैसे की दो- तीन मंझिलवाले होटेल, बनाए गए है। इस कारण से जब रात में जोरोंसें बाढ आयी, तो हजारो लोगों की जीवितहानी हुई।

8. ग्रीन हाउस इफेक्ट, ग्लोबल वार्मिंग और कार्बन टैक्स पर युनो की 21 वीं कार्यसूची के बारे में आप क्या कहना चाहते है?

प्रा. माधव गाडगीळ- उर्जा स्रोतों का विवेक से इस्तेमाल करना और इनका संरक्षण करना हर एक व्यक्ति की जिम्मेदारी बनती है। स्कॅन्डीनेवीयन देश प्रकृति के पालन-पोषण एवं संरक्षण के लिए बहुत कार्य कर रहे हैं। उर्जा स्रोत कई प्रकार के है- जैसे बायोगॅस एक अच्छा उर्जा स्रोत है। लेकिन उर्जा निर्माण बढ़ने की वजह से ग्रीन हाउस गॅसेस यह संकल्पना सामने आई है।

9. स्पेशल इकॉनॉमिक झोन (एसइझेड) और इको सेंसीटिव झोन (इएसझेड), सरकारी अनुमोदनार्थ प्रस्तुत है। इसपर आपके विचार क्या है?

प्रा. माधव गाडगीळ- पर्यावरण पर हो रहे अधिक्रमणों की वजह से इको सेंसीटिव झोन बनाए गए है। लेकिन ऐसे क्षेत्र बनाने के लिए वैज्ञानिक आधार की जरूरत होती है। वर्ष 2002 में भारत में जैवविविधता कानून का प्रस्ताव रखा गया था लेकिन आजतक यह कानून लागू नहीं हो पाया है। महाराष्ट्र में भी इसके लिए कुछ खास कदम नहीं उठाए गए है।

10. सर आप क्या संदेश देना चाहते हैं?

प्रा. माधव गाडगीळ- जैवविविधता कानून तो ग्यारह साल पहेले ही बन गया हैं। अब सभी जगह उसके कार्यान्वयन के लिए जागरूकता पैदा की जानी चाहिए। केवल इस कानून को लागू करने वाले सरकार के अधिकारी ही नहीं बल्कि आम आदमी भी जैवविविधता की देखभाल करने में सक्रिय रूप से सहभागी हो सकते हैं। आम जनता अपने ग्रामों में, नगरपालिकाओं में आदि जगहों पर जैवविविधता समिति बना सकती है। नगरोंमे - महानगरोंमे पर्यावरण स्थिति/ एनवॉयर्न्मेटल स्टेटस रिपोर्ट स्थानिक जनता द्वारा ही बनाया जाना चाहिए। हर एक वॉर्ड में पर्यावरण देखभाल समिति की स्थापना तो हो गयी है, मगर स्थानिक लोग इनमे सक्रिय होने चाहिये। इनमे पर्यावरण स्थिति रिपोर्ट के माध्यमसे स्थानिक लोगों को पर्यावरण सुधार कार्यान्वयन के बारे में अपने विचार प्रस्तुत करने चाहिये लोगों ने ही योगदान दिया तो पर्यावरण संरक्षण के लिए शासन पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा। पुणे के पंचवटी - सुस रोड के वॉर्ड क्र-10 में स्वयंस्फूर्ति से लोग पर्यावरण संरक्षण का कार्य कर रहे है और पर्यावरण सुरक्षा के लिए अपने सुझाव भी देते है। सभी से निवेदन है कि, लोगों को आपस में मिलकर अपनी पर्यावरण पूरक विकास योजनाएँ बनानी चाहिए। सूचना अधिकार अधिनियम का सही ढंग से इस्तेमाल करना चाहिए और अपनी नगरपालिका एवं महानगरपालिका को पर्यावरण संरक्षण कार्य के लिए संपूर्ण सहयोग देना चाहिए।

धन्यवाद सर।

डॉ. जी. सी. मिश्र

डॉ. प्रकाश देशपांडे

विषमज्वर (मलेरिया)

परिप्रेक्ष्य-

विषमज्वर (मलेरिया) मनुष्य में प्रजीवगण (एपीकोम्प्लेक्सा) के परजीवियों के संक्रमण से होता है। एक ही संक्रमणकर्ता से होनेवाले और सबसे ज्यादा रूग्णता और मृत्युदर वाले रोगों में विषमज्वर (मलेरिया), क्षय रोग (ट्युबरक्यलोसिस) के बाद दूसरे स्थान पर आता है। प्लाजमोडिअम (जिसकी 300 प्रजातियाँ है) रेंगनेवाले जीवों, पक्षियों और स्तनपायी जीवों को संक्रमित करता है। मनुष्य में विषमज्वर (मलेरिया) प्लास्मोडियम फाल्सिपारम, प्लास्मोडियम वायवॅक्स, प्लास्मोडियम मलेरिया और प्लास्मोडियम ओवल, इन चार प्रजातियों के कारण होता है। प्लाजमोडियम नोलेसी प्रजाति के परजीवी, जो कि अब तक सिर्फ दक्षिण पूर्व एशिया के वानरों में ही पाए जाते थे वो अब मनुष्य को भी संक्रमित करते हुए पाए जाते है। रोगाणुवाहक मच्छर एनोफिलीस मादा के रक्तभोजन के दौरान यह परजीवी मनुष्य को संक्रमित करता है। ज्यादातर संक्रमण प्लाजमोडियम फाल्सिपारम (45%) और प्लाज्मोडियम वायवॅक्स (55%) की वजह से होते है।

विषमज्वर/मलेरिया का वितरण तथा प्रभाव-

प्लाजमोडियम फाल्सिपारम सदियों से मनुष्य के लिए एक बड़ी विपत्ति रहा है और इसके कारण प्रतिवर्ष 5 लाख से ज्यादा बच्चों की जानें जाती है। विषमज्वर (मलेरिया) को अभी भी प्राणघातक व्याधि ही माना जाता है। 100 देशों में तो ये स्थानिक रोग ही है। वर्तमान में, मलेरिया भूमध्य रेखा (ट्रॉपिकल और सबट्रॉपिकल) के दोनों तरफ विस्तृत क्षेत्र में फैला हुआ है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्लूएचओ) के नवीनतम अंदाज़ के अनुसार 2010 में विषमज्वर (मलेरिया) के 21.9 करोड़ मामले दर्ज हुए थे और जिससे

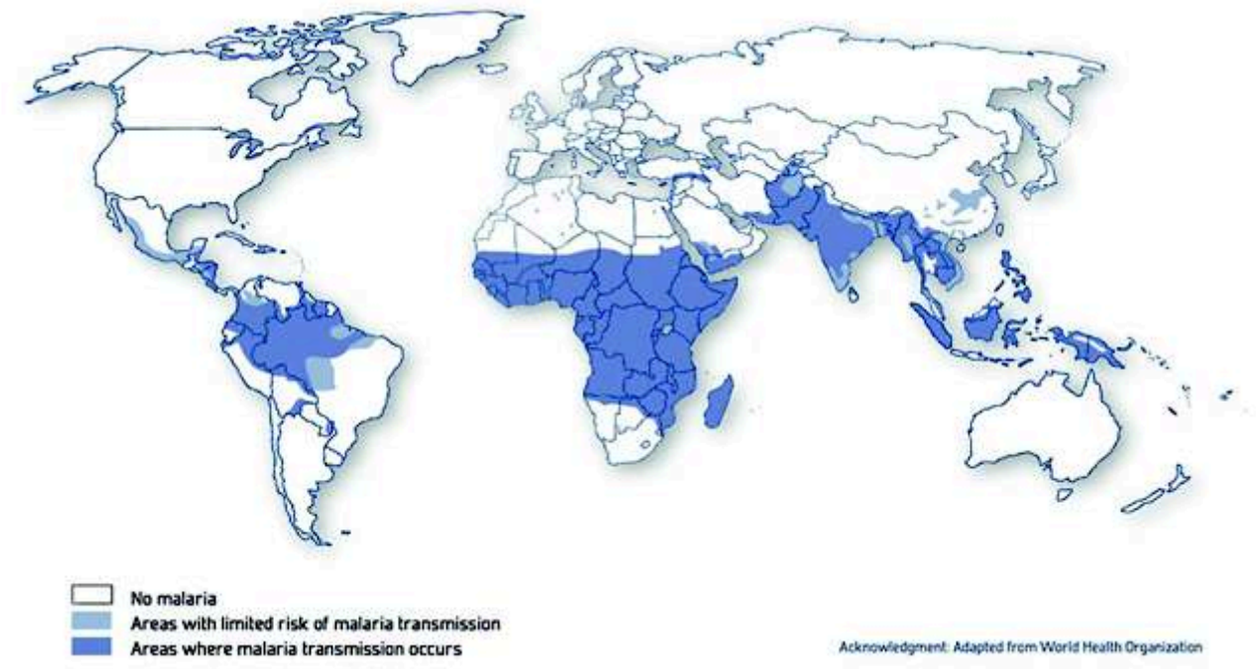

2009 में विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्लूएचओ) द्वारा दर्शाया गया विषमज्वर से ग्रस्त मरीजों के देशों का मानचित्र द्वारा रेखांकन।

अंदाजित 6.6 लाख लोगों की मौत हुई (अनिश्चितता की सीमा के साथ 4.9 लाख से 8.36 लाख) । अधिकतम मृत्युदर अफ्रिका के रहनेवाले बच्चों में पाया जाता है, जहाँ पर प्रति मिनट में एक बच्चे की मौत मलेरिया से होती है। 2010 के देशस्तरीय रोगभार के आँकडें दिखाते है कि, विषमज्वर (मलेरिया) से होनेवाली मौत में से 80 प्रतिशत मामले सिर्फ 17 देशों के अंदर ही पाए जाते है।

प्लाजमोडियम फाल्सीपारम से संक्रमित कुछ लोगों में गंभीर मस्तिष्क विकृति पाई जाती है, जिसे प्रमस्तिष्क मलेरिया कहा जाता है। अफ्रिका में किए गए परीक्षण के अनुसार प्रमस्तिष्क मलेरिया के रोगियों में से 15 से 30 प्रतिशत लोग सर्वश्रेष्ठ चिकित्सा के बावजूद भी मर जाते है और बचनेवालों में से 10 से 24 प्रतिशत लोग चेतनातंत्र की अल्पकालिन या दीर्घकालिन क्षीणता से पीड़ित होते है। प्रतिवर्ष अधिकतम अफ्रिकावासी लोग इस व्याधि का शिकार बनते है और इसलिए लोकस्वास्थ्य की दृष्टि से ये सबसे चिंताजनक मुद्दा है।

विषमज्वराणु (प्लाज्मोडियम) का जीवनचक्र -

विषमज्वर के परजीवी के वाहक एनोफिलीस प्रजाति के मादा मच्छर के काटने से एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य में फैलता है। संक्रमण के बाद ये परजीवी (बीजाणु के रूप में) रक्त के माध्यम से यकृत तक सफर करते है और फिर यकृत की कोशिकाओं पर आक्रमण करते है। यकृत की कोशिकाओं में ये परजीवी 8 से 10 दिनों तक बहुगुणित होते रहते है और हजारो अंशाणु (मेरोजोइट्स) में परिवर्तित हो जाते है। ये अंशाणु रक्तप्रवाह में प्रवेश करते है और लाल रक्त कोशिकाओं को संक्रमित करते है। लाल रक्त कोशिकाओं में ये परजीवी अलैंगिक जनन करके बहुगुणित होते रहते है, जहाँ ये वलय रूप में (रिंगअवस्था में) विकसित होकर फिर भोजाणु (ट्रोफोजोइट्स) और फिर बहुनाभिकीय खण्डप्रसू (शाइजोण्ट) बनते है। ये खण्डप्रसू (शाइजोण्ट) विदीर्ण (बर्स्ट) होकर अलैंगिक प्रजनन से पैदा किए हुए 16-32 आत्मज अंशाणुओं (मेरोजोइट्स) को रक्तप्रवाह में मुक्त करता है, जिसके साथ-साथ ये परजीवी से पैदा हुआ ज्वरकारी विषाक्त पदार्थ भी रक्त में प्रवेश कराता है। नए जन्मे हुए अंशाणु (मेरोजोइट्स) फिर नई लाल रक्त कोशिकाओं पर आक्रमण करते है, जहाँ पर उनका नया जीवनचक्र शुरू होता है। कुछ परजीव वलय अवस्था (रिंग अवस्था) में से नर और मादा जननाणु (पुरूष और मादा गॅमेटोसाईट्स) में परिवर्तित होते है, जो कि मच्छरों के रक्तभोजन के दौरान मच्छरों में प्रविष्ट होते है। जननाणु के निषेचन के बाद ये युग्मज (जाइगोट्स) विकसित होके अंडाणु बनाते है, जिसमें से बीजाणु बनते है और फिर वे मच्छरों की लारग्रंथियों में स्थायी होते है। मच्छरों के काटने के दौरान ये बीजाणु मनुष्यों में संचारित होते है। परजीवी की लाल रक्त कोशिका स्थित अवस्था के दौरान ही मलेरिया के लक्षण जैसे शरीर में कंपन, ज्वर आदि दिखाई पड़ते है। बीजाणु अवस्था से संक्रमण होनेपर 10 दिन से लेकर 4 हफ्ते के बाद ही पहली बार ये लक्षण नजर आते है।

विषमज्वर/ मलेरिया (प्लाजमोडियासिस)-

विषमज्वर/मलेरिया के नैदानिक लक्षण इस बात पर आधारित रहते है कि, मनुष्य में संक्रमण कौनसी प्रजाति के परजीवी से हुआ है। सामान्यतः इसके लक्षण इस प्रकार होते है- अल्परक्तता, आवधिक बुखार, उत्क्लेश, कम्पन, सरदर्द आदि। प्लाज्मोडियम फाल्सिपारम के संक्रमण से अलक्षणात्मक विषमज्वर (मलेरिया), सौम्य और तीव्र श्वसनप्रणाली की पीडा, बहुअवयवी शिथिलता और प्रमस्तिष्कीय विषमज्वर (मलेरिया) होता है। इस परजीवी की वजह से महिलाओं में अपरा का मलेरिया भी हो सकता है।

उद्भव: 10-20 हजार वर्ष पहले, कृषिकर्म की शुरूआत से ही होमो सेपियन्स (मनुष्यजाति) और प्लाजमोडियम फाल्सिपारम आज तक सह विकसित हुए है। जंगल में रहनेवाले चिम्पान्झी और गोरिला बड़ी संख्या में प्लाजमोडियम प्रजाति के और लावेरानिया के 6 उपवर्ग

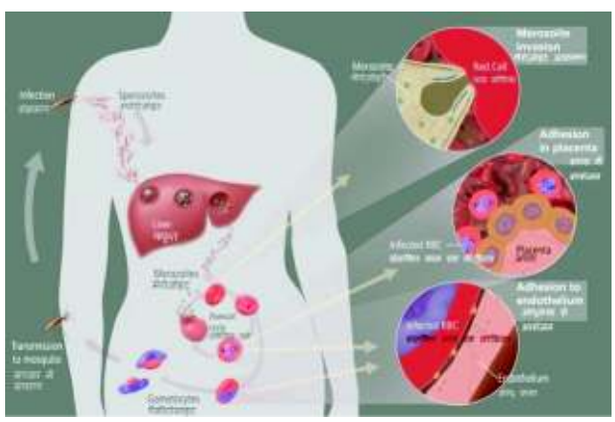

विषमज्वर परजीवी का जीवनचक्र

(जिनमें से एक उपवर्ग प्लाज्मोडियम फाल्सिपारम का जनक है) के आश्रयस्थान है। बड़ी मात्रा में आलय होने के बावजूद भी यह बात अभी साफ नहीं हुई की बंदर मनुष्य के लिए संक्रमण का स्त्रोत है या नहीं। उत्क्रांतिवाद पृथ्थकरण के अभ्यास से ये पता चलता है कि प्लाज्मोडियम फाल्सिपारम का अविर्भाव एक गोरिला से मनुष्य में संचरण के दौरान हुआ है।

विषमज्वर/ मलेरिया परजीवी का संजीन (जीनोम): मलेरिया परजीवी में गुणसुत्र की 14 जोड़ियाँ (द्विगुणित) होती है। मलेरिया परजीवी की मच्छरों में पायी जानेवाली युग्मनज अवस्था के अलावा उसके जीवनचक्र की सारी अवस्थाएं एकगुणित अवस्था ही होती है। उसका संजीन 24 मेगाबाईट्स पेअर जितना और एडेनीन व थायमीन से संपन्न होता है। (प्लाज्मोडियम फाल्सिपारम में 80%) कणाभसूत्रीय डीएनए (6 किलोबाइट्स) के अलावा परजीवियों में एपीकोप्लास्ट डीएनए भी होता है, जो कि उसके जीवित रहने के लिए बहुत जरूरी होता है। एपीकोप्लास्ट एपीकोम्प्लेक्सा में गैरप्रकाश संश्लेषित तरीके से पाए जानेवाला लवक है जो कि प्लाजमोडियम फाल्सिपारम जैसे मलेरिया परजीवी में भी पाया जाता है। इसका उद्भव शैवाल (हालाकि इस बात पर वाद-विवाद है कि लाल शैवाल या हरा शैवाल) के सहायक अंतःसहजीवन से होता है। वर्तमान समय में एपीकोप्लास्ट के प्रकिण्व को लक्ष्य बनाकर नई मलेरिया विरोधी औषधियों का निर्माण किया जा रहा है। कणाभसूत्र एक सार्वत्रिक कोशिकांग है जो कि सारे सुकेन्द्रिक जीवों में कई सारी कोशीय प्रक्रियाओं और कोशिय संकेतन के लिए अत्यंत आवश्यक है। सभी कणाभसूत्रों में उनका अपना डीएनए और कणाभसूत्रीय संजीन होता है जो कि सारे जीवों में परिमाण, संरचना और संघटन के हिसाब से एक दूसरे से काफी अलग होता है।

प्राणी प्रतिरूप: बहुत खोजबीन के बाद यह पाया गया कि मलेरिया को पैदा करनेवाला जीवाणु चुहों में भी मनुष्य के प्रारूप बीमारी पैदा कर सकता है। इस खोज के तत्पश्चात मलेरिया जीवाणुओं के परजीव-पोषक आंतरक्रिया और परजीव के प्रतिरक्षाजीवविज्ञान को गहराई से समझने का श्रेष्ठ अवसर मिला है।

विषमज्वर का प्रतिरक्षाव्याधि विज्ञान: प्लाज्मोडियम फाल्सिपारम कुछ विशेष लक्षण अभिव्यक्त करता है जैसे कि सौम्य मलेरिया, गंभीर मलेरिया, प्रमस्तिष्क मलेरिया बहुअवयव विफलता, अपरा मलेरिया और गैरलाक्षणिक मलेरिया। संक्रमण का परिणाम कुछ चीजों पर आधार रखता है जैसे कि परजीवियों की प्रजाति और संक्रमित व्यक्ति की प्रतिरक्षा प्रणाली की स्थिति। शाइजोण्ट के विदारण के दौरान परजीवी रक्तप्रवाह में ज्वरकारक, विषाक्त पदार्थ और कुछ मलेरिया रंगद्रव्य मुक्त करते है। ये कारक प्रतिरक्षा कोशिकाओं (जैसे कि MO/MQ, DC) को सक्रिय करता है। ये कोशिकाए पूर्व अभिज्वाल्य सायटोकाईन्स और किमोकाईन्स को बढ़ा देते है। ये कारक मस्तिष्क के अधःश्वेतक को प्रभावित करता है, जिससे ज्वर जैसी स्थिति का निर्माण होता है। CD8+ कोशिकाएं मस्तिष्क में संचित होकर मस्तिष्कावरणशोथ पैदा करती है। इसके अलावा संक्रमित लाल रक्त कोशिकाओं का रक्तवाहिनीओं के अंतःस्तर से चिपकाना, जैसे और भी कई कारण है जो इस संक्रमण को और गंभीर बनाते है। परजीवी का प्रोटीन जैसे कि PfEMP-1 जो कि संक्रमित लाल रक्त कोशिकाओं की झिल्ली पर जमा होता है, उसी की वजह से ये कोशिकाएं अंतःस्तर के CD36, ICAM-1 और CR1 जैसे रिसेप्टर्स के साथ बंधन बनाती है। PfEMP1 प्रोटीन अपरा के कोन्ड्रोइटिन सल्फेट A(CSA) के साथ भी बंधन बनाता है जिससे अपरा का मलेरिया होता है।

> **तीन दशक में मलेरिया के खिलाफ RTS-S के समेत कई तरह के टीकों को विकसित किया गया, लेकिन इन्होंने सिर्फ आंशिक सुरक्षा ही प्रदान की**

लाल रक्त कोशिकाओं का जेनेटिक प्रतिरोध/ परजीवी के संक्रमण से प्राकृतिक प्रतिरोध: मनुष्य और प्लाज्मोडियम फाल्सिपारम में सहविकास होने के साथ-साथ मनुष्य संजीन के बहुरूपों का भी निर्माण हुआ जो कि मनुष्य में ना कि सिर्फ परजीवियों के खिलाफ प्रतिरोध पैदा करते है बल्कि मनुष्य में रक्तकणरंजकद्रव्य की व्याधियाँ को भी पैदा करते है। ऐसे ही सिकलसेल अनिमिया और थेलेसैमिया वाले अफ्रिकन बच्चों में असाधारण मात्रा में मलेरिया के खिलाफ प्रतिरोधकता पाई गई है।

विषमज्वर/ मलेरिया में प्रतिरक्षादमन: मलेरिया में प्रतिरक्षादमन काफी हद तक देखा गया है। मलेरिया के फैलाव वाले विस्तार के स्थानिक लोग अक्सर कई बार इस संक्रमण से प्रभावित होते है, पर उनकी प्रतिरोधकता प्रणाली पूरी तरह से रक्षण देने में नाकाम रहती है। लेकिन बार-बार संक्रमण होने से इन लोगों में प्रतिरोधकता प्रणाली आंशिक सुरक्षा विकसित कर सकती है, जिससे इन लोगों में तीव्र मलेरिया और प्रमस्तिष्क मलेरिया की संभावना काफी कम हो जाती है। प्रतिरोधकता प्रणाली की इस आंशिक सक्रियता का कारण है बहुत ही कम मात्रा में स्मृति कोशिकाओं का निर्माण जिसके परिणामस्वरूप परजीवी के खिलाफ पर्याप्त मात्रा में रक्षात्मक प्रतिपिंड नहीं बन पाते है।

विषमज्वर/ मलेरिया की रोकथाम में पाई जानेवाली समस्याएं : औषधियों से प्रतिरोध : प्रकृतिकृत परजीवियों ने मलेरियाविरोधी औषधियों जैसे कि क्लोकोक्कीन, क्विनीन के खिलाफ काफी हद तक प्रतिरोध विकसित कर दिया है। साथ ही मच्छर जैसे रोगवाहकों ने भी कीटनाशकों के खिलाफ प्रतिरोध का निर्माण कर दिया है। मौजुदा समय में सिर्फ आर्टेमिसीन और उसके व्युत्पन्न ही उपलब्ध औषधियाँ है, जिन पर मलेरिया के ज्यादा मै लाववाले विस्तारों में भी उपचार के लिए भरोसा किया जा सकता है।

विषमज्वर/ मलेरिया का टीका और प्रतिजन में विविधता : वर्तमान में मलेरिया का कोई टीका उपलब्ध नहीं है, सबसे अग्रवर्ती टीका प्रत्याशी RTS-S ने 40% प्रभावकारिता दिखाई है। इस दिशा में हो रहे अन्वेषणों के मुख्य उद्देश्य है- प्रतिजन संबंधी लक्ष्य को स्पष्ट करना, प्रतिजन की प्रकृति और वे किस शैली में पेश आते है और साथ ही में घटक सामग्रियों का प्रतिरक्षा उत्तेजक प्रभाव प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया को कैसे असर करता है ये देखना और समझना वैज्ञानिकों द्वारा अभी भी जारी है। मलेरिया के खिलाफ रक्षात्मक प्रतिरक्षा के लिए शरीरद्वीय, प्रतिपिंड अवलंबित कोशिय अवरोध और साथ में प्रेरक-स्मृति कोशिका की प्रतिक्रिया का प्रेरण बहुत जरूरी है। पिछले तीन दशक में मलेरिया के खिलाफ RTS-S के समेत कई तरह के टीकों को विकसित किया गया, लेकिन इन्होंने सिर्फ आंशिक सुरक्षा ही प्रदान की। इस प्रभावहीनता का कारण प्रतिजन में विविधता हो सकता है। मलेरिया के टीके के निर्माण में अभी प्रतिजन का बहुरूप सबसे दुष्कर रूकावट है। प्लाज्मोडियम फाल्सिपारम के जीवनचक्र के दौरान उसके प्रतिजन के कई बहुरूप मनुष्य की प्रतिरोधकता प्रणाली के सामने आते है। इसमें से एपीकल मेम्ब्रेन एन्टीजन 1 (AMA1), मेरोझोईट सर्फेस प्रोटीन 1 (MSP-1), इरिथ्रोसाइट बाइन्डिंग एन्टीजन (EBA-175) और सरकमस्पोरोझोइट प्रोटीन टीके के निर्माण के लिए खास तौर पर महत्त्वपूर्ण है।

रोग का निरोध: मलेरिया के ज्यादा फैलाववाली जगहों की मुलाकात लेनेवाले यात्रियों को एटोवाक्वोन-प्रोग्वानिल, क्लोरोक्विन, डॉक्सीसायक्लीन, मेफ्लोक्वीन और प्रिमाक्विन जैसी दवाईयाँ पहले से ही लेने की सलाह दी जाती है। मच्छरों के काटने से बचने के लिए कीटनाशक से धुली हुई बिस्तर की जाली और मच्छर प्रतिकर्षक का प्रयोग करना चाहिए।

निष्कर्ष: परजीवी के संजीन, प्रोटिओमिक्स और जैव सूचना विज्ञान जैसी शाखाओं के विविध दृष्टिकोण और नवीनतम ज्ञान के प्रयोग से मलेरिया प्रतिरोधक टीके और नए अणुओं के निर्माण के लिए खोज अभी जारी है। प्रतिजन संबंधी और औषध संबंधी नए अणुओं की शिनाख्त के साथ-साथ एपीकोप्लास्ट के जैवसंश्लेषण मार्ग, रक्तकण रंजकद्रव्य चयापचय, अंशाणु ते आक्रमक और जनन कोशिकाओं के प्रसारण को रोकने जैसे कई और पहलूओं पर भी ध्यान केन्द्रीत किया जा रहा है। मुख्यतः उचित जल निष्कीटन से काफी हद तक इस बीमारी से बचा जा सकता है।

डॉ. जी. सी. मिश्र और **डॉ. प्रकाश देशपांडे**
(हिन्दी रूपान्तर- सुश्रि. मेघल देसाई)

12 अप्रैल, 2013 को रात 9.30 बजे आकाशवाणी के दिल्ली केन्द्र से प्रसारित 'रेडियो स्कोप विज्ञान पत्रिका के अंतर्गत प्रसारित वार्ताओं/ वाख्यानों का हिंदी रूपांतर
(कार्यक्रम संयोजक- श्रीमती. ज्योत्स्ना केतकर, आकाशवाणी, पुणे,
समन्वयक - डॉ. ज्योति राव, वैज्ञानिक (विज्ञान संप्रेषण), एनसीसीएस, पुणे)

क्ष-किरण विवर्तन (ऐक्स-रे डिफ्रैक्शन) के सौ साल

-डॉ. शेखर मांडे

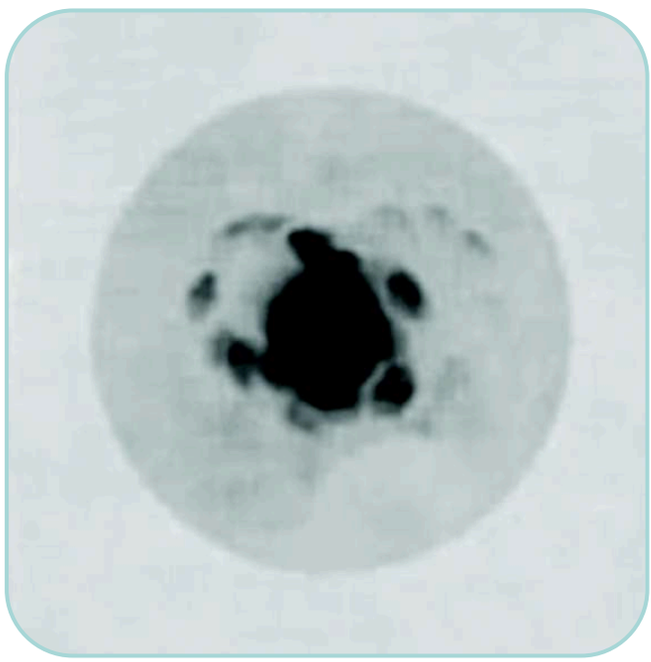

कई वर्षों से स्फटिक मनुष्य को लुभातें आ रहे है। अतिप्राचीन काल से, मानव प्रजाति को इनका आकर्षण रहा है, खास कर गहनों में इनका उपयोग किया जाता है। उनके आकर्षक आकार और रंगों की वजह से, लोग चमत्कारिक/ दैवी शक्तियों में विश्वास रखने लगे जैसे कि, इससे शुभ शकुन होता है या कुछ अच्छी बात होती है या इससे लाभ होता है आदि। कई वर्षों से, घडियों में, रेडिओ में, सौर बॅटरियों में, कम्प्यूटरों में-आदि उपकरणों में स्फटिकों का उपयोग किया जाता है। सौ साल पहले, वैज्ञानिकों का विश्वास था कि, त्रि आयामीय क्षेत्रों में अणुओं की पुनरावर्ती व्यवस्थापन से स्फटिक बनते है। इसी विश्वास के साथ, 1912 में मुनीक (जर्मनी) में क्रिस्टल्स के अपवर्तनीय गुणधर्मों पर अपने डॉक्टरीय प्रबंध पर काम कर रहे पॉल इवाल्ड चाहते थे कि भौतिकशास्त्र के व्याख्याता मॅक्स वोन लॉवे के साथ अपने अनुसंधान की कुछ कठिनाईयों पर विचार-विमर्श करें। जनवरी, 1912 में बगीचे में घुमते-घुमते की हुई दो बैठकों में, लॉवे ने इवाल्ड के निरीक्षणों पर गौर किया- इवाल्ड के निरीक्षणों के अनुसार क्रिस्टल्स में होनेवाले अणुओं के बीच का अंतर दृश्य प्रकाश की तरंग लांबी के 1/500 या 1/1000 के क्रम में होने की संभावना है। इसपर गहन विचार करने के पश्चात और सॉमरफिल्ड जैसे अपने समकक्ष के साथ विचार

विनिमय करके लॉवे एवं उनके साथी निपींग और फ्रेड्रिक ने क्रिस्टल के पीछे फोटोग्राफिक प्लेट रखकर क्ष-किरणों को स्फटिकों के सामने उद्भासित किया। इससे विज्ञान एवं मानवता का चेहरा ही बदल गया। लॉवे और उनके साथियों ने देखा कि, क्ष-किरण फोटोग्राफिक प्लेट पर जब सामने से टकराती है तब वह एक ठोस प्रतिमुद्रा बनाती है। परंतु, फोटोग्राफिक प्लेट ने ऐसे ओजस्वी दागों को भी दर्शाया जो सीधे किरण से वास्तविक रूप में अपसरित हुए थे। कई प्रयोगों और फोटोग्राफ्स के विश्लेषण के पश्चात, 8 जून, 1912 को लॉवे ने प्रस्ताव रखा कि, क्ष-किरणों के लिए स्फटिक एक तीन आयामिय जाली के रूप में कार्य करते है, जिससे क्ष- किरणों का विवर्तन होता है। इस अविष्कार ने भौतिकशास्त्र जगत में सनसनी पैदा कर दी। मध्यकाल में, इंग्लैड में स्थित ब्रॅग परिवार जो छुट्टियाँ मना रहे थे, उन्हें लॉवे के अविष्कार के बारे में खबर मिली। विलीयम हेनरी ब्रॅग भौतिकशास्त्र के जानेमाने प्राध्यापक थे और क्ष किरण सिद्धांत की कण प्रकृति पर अध्ययन कर रहे थे, उनका एक बेटा -विलियम लॉरेन्स ब्रॅग केम्ब्रीज में पढ़ रहा था। इस अविष्कार के अतुलनीय महत्त्व को ब्रॅग पिता-पुत्र ने जाना और कई गहन चर्चाओं के पश्चात वे इस नतीजे पर पहुँचे कि, स्फटिकों की गोपनीय प्रवृत्ति को स्पष्ट करने का सामर्थ्य इस तकनीक में है- उदा.-स्फटिकों में अणुओं के भीतर परमाणुओं का व्यवस्थापन।

इस अविष्कार की शताब्दीपूर्ति वर्ष को युनेस्को ने वर्ष २०१४ को क्रिस्टेलोग्राफी वर्ष के रूप में घोषित किया है।

केम्ब्रीज में अपनी विद्यार्थीदशा में वापसी के पश्चात लॉरेन्स ब्रॅग ने ये प्रस्ताव रखा कि, क्रिस्टल्स जिनसे क्ष-किरणों के विवर्तन प्रतिबिंबों को प्राप्त किए जा सकता है, को परमाणुओंकी समांतर परतों के रूप में कल्पना की जा सकती है । प्रतिबिंबित कोण, Θ, और d, $2d \sin(\Theta) = \lambda$. समांतर परतों के बीच में दूरी होनेवाले गणितीय संबंधों को उसने दर्शाया। पूरे विश्वभर के पाठशालाओं एवं महाविद्यालियों में ब्रॅग के सिद्धांत को पढ़ाया जाने लागा। इन व्याख्याओं के पश्चात, ब्रॅग्ज ने कई खनीजों, लवणों, ऑर्गनिक एवं इनॉर्गनिक संयुगों के क्रिस्टल्स के बीच में होनेवाली परमाणु व्यवस्था को स्पष्ट किया। 1912-1914 के दौरान विलीयम हेनरी ब्रॅग और विलीयम लॉरेन्स ब्रॅग के कार्य ने नए विज्ञान क्षेत्र की स्थापना की जिसका विशेष

सर विलियम हेनरी ब्रॅग

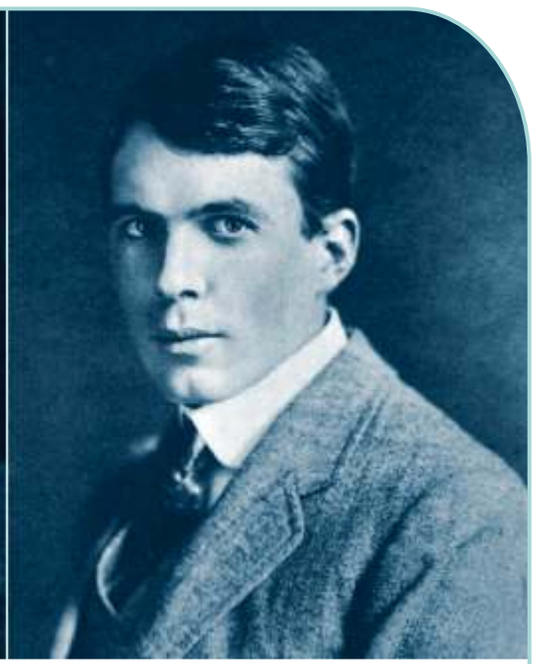

सर विलियम लॉरेन्स ब्रॅग

रूप से सामान्य और प्राकृतिक विज्ञान पर बहुत प्रभाव पड़ा। इस अविष्कार के लिए, 1914 में लॉवे को नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ और 1915 में ब्रॅग पिता-पुत्र को नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया । ब्रॅग पिता-पुत्र की केवल एक ही जोडी ऐसी है, जिन्हें संयुक्त रूप से नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 25 वर्ष की आयु में नोबेल पुरस्कार प्राप्त करनेवाले लॉरेन्स ब्रॅग आज तक के सबसे छोटे नोबेल लॉरेल भूषित है। लॉरेन्स ब्रॅग द्वारा केम्ब्रीज में स्थापित प्रयोगशाला से जीवित प्रणालियों की प्रकृति एवं डीएनए की संरचना जैसे योगदान को जानने हमें बहुत मदद प्राप्त हुई। पहले कुछ वर्षों में ब्रॅग्ज ने हिरे की संरचना स्पष्ट की। हिरे में कार्बन परमाणुओं का बहुत भारी नेटवर्क पाया जाता है, जिसमें से हर एक कार्बन परमाणु एक अन्य कार्बन परमाणु के चतुष्फलकीय परिवेश में रहता है। जैसे कि आज हम जानते है कि हिरे की संरचना ग्राफाईट की बनी हुई होती है। ग्राफाईट का अन्य ऐलोट्रोपिक/अपररूपी प्रारूप पेन्सील में इस्तेमाल किया जाता है। इस कार्यक्रम को सुननेवाले समस्त पतियों से गुजारिश है कि, अगली बार जब आप अपनी पत्नि को हिरे की अंगूठी उपहार के तौर पर भेंट देना चाहतें हैं, तब उसे प्यार से कह सकते है कि, आज मैं तुम्हें कार्बन्स की सहसंयोजित रूप से बंधित चतुष्फलकीय अद्भुत अपरिमेय रचना भेंट करने जा रहा हूँ।

थोडी ही अवधि में, जटीलतायुक्त अणुओं की संरचना स्पष्ट करने के कार्य में विश्वभर के कई लोगों ने सहभाग लिया। जीवन प्रणाली में विविध प्रक्रियाओं को स्पष्ट करनेवाले अणुओं का भी इसमें समावेश था। इस कार्य में भारत से सहभागी होनेवाले में से पहले थे- केदारेश्वर बैनर्जी, इन्होंने नेप्थालिन और एंथ्रासिन की संरचना को स्पष्ट किया। मद्रास के जी एन रामचन्द्रन और उनके साथियों ने, पशु उतकों में होनेवाले अणुओं के कोलैजन संरचना को दर्शाया।

ऐक्स किरण विवर्तन के अविष्कार के सौ वर्षों के पश्चात, विविध अणुओं में परमाणुओं के भौमितीय संबंधों की जानकारी से सजीव एवं निर्जीवों के बारे में हमारे ज्ञान में वृद्धि हुई है। सौ साल पहले किसे पता था कि, इस तकनीक का उपयोग करके मनुष्य प्राणि ऐसे अणुओं की निर्मिति करने की क्षमता रखता है, जिसका मानव जीवन पर गहरा असर पड़ता है एवं त्रासदायक बीमारियों के लिए प्रभावी चिकित्सा पद्धतियों के रूप में इन्हें अपनाया जा सकता है। इस क्षेत्र में अतुलनीय कार्य के लिए दो दर्जन से अधिक नोबेल पुरस्कार प्रदान किए गए है। इस अविष्कार की शताब्दीपूर्ति वर्ष को युनेस्को ने वर्ष 2014 को क्रिस्टेलोग्राफी वर्ष के रूप में घोषित किया है। तो चलिए, क्ष-किरण विवर्तन के शताब्दी समारोह मनाने में शामिल हो जाए।

प्रेरित बहुप्रभावी स्तम्भ (स्टेम) कोशिका (आयपीएस)

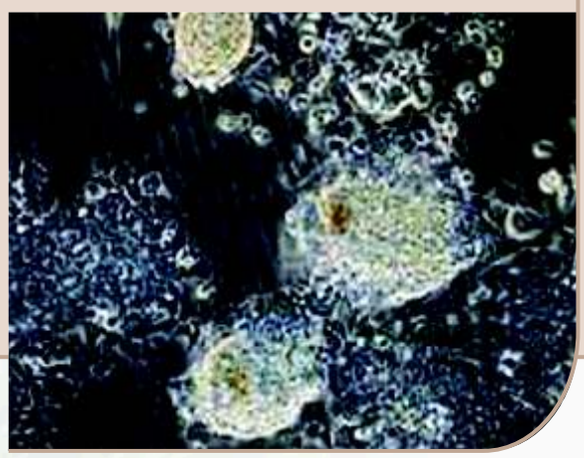

- डॉ. अंजली शिरास, डॉ. दीपा सुब्रमण्यम

प्रस्तावना-

पुरातन काल से हमने पढ़ा है कि, हमारा शरीर विविध प्रकार की कई कोशिकाओं से बनता है। हमें ज्ञात है कि, विविध अवयवों/ अंगो या उतकों में ये कोशिकाएँ विविध विशिष्ट क्रियाएं करतीं हैं। वे सारी कोशिकाएं स्तम्भ/स्टेम कोशिका नामक एक विशिष्ट प्रकार की कोशिका से उत्पन्न होती है। हाल ही में स्तम्भ कोशिकाओं पर प्रायः समाचार/ खबरें पाई गई हैं एवं वे बेहद लोकप्रसिद्ध हुई है। तो क्या हैं ये स्तम्भ (स्टेम) कोशिकाएं और उनपर इतना ध्यान क्यों आकर्षित हुआ है?

प्र) आजकल स्टेम कोशिकाओं के बारे में हम बहुत कुछ सुनते है। क्या है ये कोशिकाएँ?

डॉ. अंजली शिरास :

जैवचिकित्सीय अनुसंधान के क्षेत्र में स्टेम कोशिका अनुसंधान का क्षेत्र एक उत्तेजक क्षेत्र है। स्टेम कोशिकाओं में अपने आप को बढ़ाने की क्षमता होती है- इस गुणधर्म को स्वपुनःनिर्माण के नाम से जाना जाता है। वे डॉटर कोशिकाओं को बढ़ावा देते हैं जिनमे विशिष्ट क्रिया करने की क्षमता होती है। प्रारंभिक स्थिति में ये स्टेम कोशिकाएं भ्रूणों से संवर्धित की गई और उन्हें भ्रूणीय स्टेम (ईएस) कोशिकाओं के रूप में जाना जाने लगा। प्रौढ जीव के सभी प्रकार की विशिष्ट कोशिकाओं का निर्माण करने की क्षमता इन कोशिकाओं में होती है और इसलिए उन्हें बहुप्रभावी कहा जाता है। भ्रूण में स्थित होने के कारण इन कोशिकाओं के विलगन से भ्रूण का -हास हो जाता है। लेकिन जब भ्रूणीय स्टेम कोशिका लाईन की स्थापना होती है उसकी वृद्धि होती रहती है। अस्थिमज्जा, मस्तिष्क, वसा उतक, रक्त रज्जु, गर्भनाल और प्रौढ के अन्य विविध अवयवों में भी स्टेम कोशिकाओं के गुणधर्म पाए जातें है। दिलचस्पी की बात है कि, प्रौढ स्टेम कोशिकाएँ विशिष्ट कोशिका प्रकारों का निर्माण करती हैं और जिन उतकों में वे वास करतीं हैं उनके लिए सुयोग्य होती है।

प्र) इन स्टेम कोशिकाओं का क्या उपयोग किया जाता है ?

डॉ. दीपा सुब्रमण्यम:

ये कोशिकाएँ, त्वचा कोशिका, तंत्रिका या तंत्रिकाकोशिका, रक्त कोशिका जैसे विविध कोशिका प्रकारों का निर्माण करती है। यदि कभी ऐसी स्थिति पैदा होती है जिसमें किसी की तंत्रिका कोशिका या रक्त कोशिका क्षतिग्रस्त हुई हो, तब ऐसी स्थिति में हम स्टेम कोशिकाओं का उपयोग करके पुनःस्थापित किए जानेवाले कोशिका प्रकारों का निर्माण कर सकते है एवं मरीज में उन्हें पुनःप्रस्थापित कर सकते हैं। 2012 में स्टेम कोशिका जीवविज्ञान के क्षेत्र में शरीरक्रियाविज्ञान और चिकित्साविज्ञान में अपने अभूतपूर्व योगदान के लिए युके के प्रों जोन बी गर्डन और जापान के डॉ. शिन्या यामानाका को नोबेल पारितोषिक से पुरस्कृत किया गया, जिससे स्टेम कोशिका जीवविज्ञान के क्षेत्र को चार चाँद लगा दिए। इस क्षेत्र में उनका योगदान, केंद्रकीय पुनःयोजना का अपूर्व विज्ञान है।

प्र) ये केंद्रकीय पुनःयोजना क्या है?

डॉ. अंजली शिरास :

पुनःयोजना एक ऐसी घटना है जहाँ प्रौढ कोशिकाओं का भ्रूणीय स्टेम कोशिका जैसी अवस्था में रूपांतरण किया

जाता है। इसकी वजह से, प्राप्त संकेतों के आधार पर शरीर में किसी भी प्रकार के कोशिकाओं को बढाने की क्षमता इन कोशिकाओं में आ जाती है। प्रौढ मानवी कोशिकाओं से, उतकों से और विशिष्ट बीमारी से ग्रस्त मरीज के कोशिकाओं से इन पुनःयोजित कोशिकाओं का निर्माण किया जाता है। ये बड़ी प्रभावी है- जैसे कि, इससे हम सब के लिए भ्रूणीय स्टेम कोशिकाओं का निर्माण करना संभव हुआ है और इन कोशिकाओं पर कार्य करने का ज्ञान एवं प्रवीणता हमारे पास उपलब्ध है, इसलिए हमारे शरीर में क्षतिग्रस्त या मृत कोशिकाओं को इन कोशिकाओं से हम पुनःस्थापित कर सकतें हैं। लेकिन, नैदानिक प्रत्यारोपण चिकित्सा के लिए पुनःयोजित कोशिकाओं का विकास, नैतिक एवं नियामक समितियों द्वारा प्राप्त अनुकुल प्राधिकरण पर निर्भर होगा।

प्र) ये तो बड़ी अच्छी खबर है। मरीजों का ईलाज करने के लिए क्या डॉक्टर इस तकनीक का उपयोग कर सकते है?

डॉ. दीपा सुब्रमण्यम:

स्टेम कोशिका पर्यटन के इस जोखिमपूर्ण कार्य में, चिंता की बात यह है कि, निराश/हताश मरीजों के लिए उनके स्वास्थ्य की दृष्टि से एवं वित्तीय रूप से स्टेम कोशिका चिकित्सा हर कीमत पर अप्रमाण्य है। अगर ठीक तरह से ईलाज नहीं किया गया तो, स्टेम कोशिकाएँ घातक ट्यूमर्स को बढ़ावा दे सकतीं हैं। इसलिए, मरीजों में इनका उपयोग करने के लिए ये कोशिकाएँ पूरी तरह से सुरक्षित है या नहीं इसे सुनिश्चित करने के लिए अधिक अनुसंधान की जरूरत है। खेदजनक बात है कि, हमने सुना है कि, कई डॉक्टर्स स्टेम कोशिका चिकित्सा का समर्थन करते है। सच बात तो यह है कि, इन प्रक्रियाओं में से किसी भी प्रक्रिया को उचित एजन्सी का अनुमोदन प्राप्त नहीं हुआ है। यह जानना बहुत जरूरी है कि, स्टेम कोशिका चिकित्सा मरीजों को उपलब्ध करवाने के लिए कई नैदानिक परीक्षण करने की जरूरत पड़ेगी।

प्रौढ जीव के सभी प्रकार की विशिष्ट कोशिकाओं का निर्माण करने की क्षमता इन कोशिकाओं में होती है और इसलिए उन्हें बहुप्रभावी कहा जाता है।

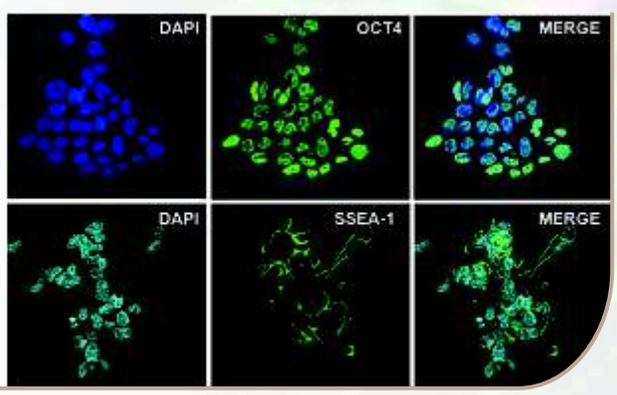

प्र) मरीजों में स्टेम कोशिकाओं और पुनःयोजित कोशिकाओं का सुरक्षित उपयोग करने से पूर्व किस प्रकार के अध्ययन की जरूरत पडेग़ी?

डॉ. अंजली शिरास :

वर्तमान में पशु मॉडिलों में कई प्रभावी ईलाज पद्धतियों का परीक्षण किया जा रहा है और उनमें से कई नैदानिक परीक्षणों के लिए लाए गए है। फरवरी, 2010 में रिन्युरॉन नामक ब्रिटीश कंपनी नें यह घोषणा की कि, आघात के तंत्रिका स्टेमकोशिका ईलाज का नैदानिक परीक्षण करने के लिए उसे अनुमोदन प्राप्त हुआ है। यु.एस फुड एण्ड ड्रग एडमिनीस्ट्रेशन (एफडीए) द्वारा मेरु-रज्जु की तीव्र क्षति के ईलाज के लिए पहली भ्रूणीय स्टेम कोशिका आधारित ईलाज को अनुमोदन प्राप्त हुआ है। स्टेम कोशिका चिकित्सा को एक सुरक्षित सच्चाई बनाने के लिए, स्टेम कोशिकाओं पर अधिक प्रकाश डालनेवाले मूल अनुसंधान करने की जरूरत है। नियंत्रित नैदानिक परीक्षण भी आज के दौर की माँग है। आगे कदम बढाने से पहले और मरीज को स्टेम कोशिका इंजेक्शन लगाने से पहले, चल रहे परीक्षणों का परिणाम जानने के लिए हमें कुछ वर्षों तक रूकना पड़ेगा।

स्टेम कोशिका विज्ञान आज उसकी बाल्यावस्था में है, पर स्टेम कोशिका अनुसंधकों और नैदानिकों को यह विश्वास है कि कई प्रकार की मानवी बीमारियों और स्थितियों पर ईलाज करने के लिए एक न एक दिन स्टेम कोशिका चिकित्सा उपलब्ध होगी।

मानवी मायक्रोबायोम

- डॉ. योगेश शौचे,
डॉ. शर्मिला मांडे

प्रस्तावना

जीवाणु जैसे सुक्ष्माजीवों की कोशिकाएँ हम सब में उपस्थित होती है। आप सब इन सुक्ष्माणुओं को बीमारी एवं मृत्यु के एजंट्स मानते हो, इसलिए यह आपको अरुचिकर/घृणास्पद लगतें हैं, लेकिन आपके लिए यह आश्चर्यजनक बात यह है कि, हमारे लिए कल्याणकारी साबित होने में वे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इसके बारे में हमें अधिक जानकारी देने के लिए आज हमारे साथ है- डॉ. शर्मिला मांडे जो टीसीएस इनोवेशन लॅब्स के जैवविज्ञान अनुसंधान एवं विकास विभाग की प्रमुख है, और डॉ. योगेश शौचे जो राष्ट्रीय कोशिका विज्ञान केन्द्र में वरीष्ठ वैज्ञानिक के रूप में कार्यरत है। डॉ. मांडे ने उस टीम का नेतृत्व किया है जिसने बायोइन्फोर्मेटिक सॉफ्टवेअर 'बायोस्युट' का विकास किया है और इस कार्य के लिए उन्हें प्रतिष्ठापूर्ण एफएपीसीसीआय और नासस्कॉम पुरस्कार प्राप्त हुए है।

डॉ. योगेश शौचे : सूक्ष्मजीव इतने छोटे होतें है कि जिन्हें हम अपनी आँखों से देख नहीं पाते लेकिन हर जगह वे उपस्थित होते हैं। इनमें जीवाणु और विषाणुओं का समावेश होता है। वे हमें नजर नहीं आते पर हम उन्हें महसूस कर सकते हैं। जिस हवा में हम साँस लेते हैं, जिस जमीन पर हम चलते हैं उसमें वे मौजूद होते हैं।

डॉ. शर्मिला मांडे : मानवी शरीर में कई प्रकार के और असंख्य सूक्ष्मजीव होते हैं। सूक्ष्मजीवी साहचर्य को मायक्रोबायोम के रूप में संबोधा जाता है। आंत्र, मुख गुहवर, जठरांत्रपथ जैसे हमारे शरीर के विविध अवयवों में उनकी बस्तियाँ होती हैं। ध्यान देनेवाली करनेवाली आश्चर्यजनिक बात यह है कि, हमारे शरीर में रहनेवाले सूक्ष्मजीवों की संख्या 10^{14} होती है, जो हमारे अंदर होनेवाली कोशिकाओं से 10 गुना ज्यादा होती है।

डॉ. योगेश शौचे : जब भी कोई सूक्ष्मजीवों के बारे में सोचता है, तब हम केवल बीमारी के बारे में ही सोचते है, लेकिन ये सच्चाई नहीं है। इनमें से अधिकतम सूक्ष्मजीव हमारे लिए फायदेमंद है। उदाहरण के तौर पर हमारे शरीर में होनेवाले सुक्ष्मजीव हमारी मदद ही करते है। जिन प्रक्रियाओं का हम अपने आप संश्लेषण नहीं कर सकते, ऐसी प्रक्रियाओं के लिए आंत्र में होनेवाले सूक्ष्मजीव अन्न का पाचन करने में, जीवनसत्वों का और अमिनो एसिड्स का निर्माण करने में हमारी मदद करते है। रोगाणुजनित जीवाणुओं के संभाव्य आक्रमण का प्रतिरोध करने के लिए, ये सूक्ष्मजीव हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली को प्रशिक्षित करते हैं।

डॉ. शर्मिला मांडे : प्रश्न यह है कि, 'हम इन सूक्ष्मजीवों का अध्ययन कैसे करें'। कई वर्षों से, वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशालाओं में इन सूक्ष्मजीवों की वृद्धि करके उन्हें जानने की कोशिश कर रहे हैं।

डॉ. योगेश शौचे : पर दुर्भाग्य की बात यह है कि, इनमें से बहुत कम यानि 1000 या 100 में से केवल 1 की प्रयोगशाला में वृद्धि करके उसपर अध्ययन किया जा सकता है। उनमें से बाकी सारों को प्रयोगशाला का कृत्रिम वातावरण पसंद नहीं है। उनके प्राकृतिक वातावरण में ही वे जीवित रहते है और उनकी वृद्धि होती है, उदा. हमारा आंत्र।

डॉ. शर्मिला मांडे : अबतक जो अज्ञात थे ऐसे अधिकतम सूक्ष्मजीवों का अध्ययन किस प्रकार करें इसपर वैज्ञानिक विचार कर रहे थे। इससे मेटाजीनोमिक्स नामक नया क्षेत्र सामने आया। इस क्षेत्र ने, सभी प्रकार के सूक्ष्मजीवों और जिनकी प्रयोगशाला में वृद्धि नहीं हो सकती ऐसे सभी सूक्ष्मजीवों का अध्ययन करने में हमारी मदद की है।

डॉ. योगेश शौचे : जिस प्रकार पारंपारिक पद्धति में हर एक सूक्ष्मजीव का अध्ययन किया जाता है, उससे अलग, मेटाजीनोमिक्स पद्धति में किसी भी वातावरण से संपूर्ण सूक्ष्मजीव वर्ग को अलग करके उनके डीएनए

का अध्ययन करना शामिल है। पिछले 4-5 वर्षों में डीएनए सिक्वेन्सिंग तकनीकों में हुई प्रगति की वजह से सभी सूक्ष्मजीवों से सभी डीएनए का सिक्वेन्स करना संभव है।

डॉ. शर्मिला मांडे : डीएनए सिक्वेन्सिंग तकनीक नाहि केवल किफायती है बल्कि आउटपुट डाटा में भी वृद्धि हुई है। उदा, हर एक सिक्वेन्सिंग रन से जिगाबाईट्स डाटा की निर्मिति हो सकती है। डीएनए सिक्वेन्सिंग प्राप्त करना आसान बात है लेकिन उसका सही अर्थ लगाना बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य है। किसी भी वातावरण में उपस्थित सूक्ष्मजीवों के प्रकारों को जानने के लिए और उनमें उपस्थित महत्त्वपूर्ण कार्यरत वर्गों को जानने के लिए वैज्ञानिकों ने अभिकलनात्मक पद्धतियों का विकास किया है।

डॉ. योगेश शौचे : इसके कारण अधिकाधिक नई जानकारी प्राप्त हुई है। कई प्रकार की बीमारियों और रोगों को जानने में इन सूक्ष्मजीवों की भूमिकाओं का अध्ययन वैज्ञानिकों ने किया है। उदाहरण के तौर पर आहार, आयु, लिंग, भौगोलिक क्षेत्र और मानव जाति में बदलाव से, हमारे आंत्र में उपस्थित जीवाणुओं में किस प्रकार बदलाव होते है इसके बारे में वैज्ञानिकों ने जानकारी प्राप्त करना शुरू किया है।

डॉ. शर्मिला मांडे : हमारा शरीरक्रियाविज्ञान, विकास, पोषण स्थिति, स्वास्थ्य और प्रतिरक्षा आदि को स्पष्ट करने के लिए हममें स्थित सूक्ष्मजीवी साहचर्य विशेष भूमिका निभाएगा। ऐसे कई साहचर्यों को वर्तमान वैज्ञानिक शोधकार्यों की वजह से पुष्टि मिली है। उदाहरण के लिए, स्थूलता, मधुमेह और कर्करोग जैसी कई बीमारियों एवं शरीरक्रिया वैज्ञानिक रोगों में विषम या विचलित आंत्र सुक्ष्मस्फुरा का अंतर्भाव होता है। अध्ययनों द्वारा यह दर्शाया गया है कि, कुछ मददगार सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति की वजह से आंत्रिक रोगाणुओं से मानवी परपोषी का संरक्षण होता है।

डॉ. योगेश शौचे : मेटाजीनोमिक्स पद्धति द्वारा वैज्ञानिकों ने आंत्र सुक्ष्माणुओं पर प्रतिजैविकों के परिणामों का अध्ययन किया है। यह देखा गया कि, ये प्रतिजैविक नाहि केवल आंत्र में उपस्थित रोगाणुजनित जीवाणुओं को मार देते है, बल्कि फायदेमंद जीवाणुओं पर भी असर करते है। जब प्रतिजैविकों की मात्रा पूर्ण हो जाती है, तब तत्पश्चात स्वस्थ सूक्ष्मजीवी प्रवर्ग को पुनः प्राप्त करने के लिए कई दिन लगते हैं।

डॉ. शर्मिला मांडे : भारत के कुपोषण ग्रस्त और स्वस्थ बच्चों पर हाल ही में किए गए अध्ययन ने यह सूचित किया है कि, कुपोषित बच्चों में आंत्रसंबंधी विकृतियाँ पाई गई जिनकी वजह से आंत्र प्रदाहन की समस्याएँ उत्पन्न होती है। इसके परिणामस्वरूप पोषण मूल्यों का अपावशोषण हुआ। इसके अलावा, कुपोषित बच्चे के आंत्र में फायदेमंद जीवाणु वर्गों का अभाव दिखाई दिया। इस तरह, अधिकाधिक कुपोषित बच्चों के आंत्र सूक्ष्मजीवों के अध्ययन से उचित प्रोबायोटिक की रूपरेखा तैयार करने में हमें मदद मिलेगी जिससे कुपोषण समस्या का हम अच्छी तरह से सामना कर पाऐंगे।

डॉ. योगेश शौचे : वर्तमान अध्ययनों ने सूचित किया है कि, जीवाणु प्रजातियों के वर्गों के अनुसार मानवी आंत्र को तीन वर्गों में वर्गीकृत किया है। अध्ययनों ने यह भी सूचित किया है कि, दुबले लोगों की तुलना में स्थूल लोगों के आंत्र में कुछ जीवाणु प्रजातियाँ अधिक मात्रा में पाई जाती है।

किस तरह पोषण मूल्य, सूक्ष्मजीवी संगठन पर एवं मधुमेह की जोखिम पर परिणामकारी होते हैं, इस पर अध्ययन शुरू किया है। भारत एक ऐसी अनोखी जगह है, जहाँ संयुक्त परिवार में रहनेवाले और अलग-अलग खान-पान की आदतें रखनेवाले अनेक प्रकार के लोग रहतें हैं, इसलिए यहाँ विविध विषयों का अध्ययन करना दिलचस्पी की बात है।

डॉ. शर्मिला मांडे : हमारे स्वास्थ्य को बरकरार रखने एवं जिनके कारण विविध रोग एवं बीमारियाँ होती है, ऐसे विविध सूक्ष्मजीवों को जानना यही मानवी मायक्रोबायोम अध्ययन का उद्देश्य यह है। इन अन्वेषणों के परिणामस्वरूप, विविध रोगों एवं बीमारियों की शुरूआत एवं प्रगति के लिए चिन्हकों का परिचय किया जा सकता है। अच्छे नैदानिक, चिकित्सीय एवं निवारक नीतियों की रूपरेखा तैयार करना यह बात किए हुए अन्वेषणों/ खोजों से ये अपेक्षित है। उदाहरण के तौर पर, भविष्य में डॉक्टर्स मरीज के आंत्र के प्रकार की जाँच करेंगे और उसपर आधारित आवश्यक ईलाज के लिए औषध-निर्देशन करेंगे। इस अध्ययन का उद्देश्य यह है कि, 'व्यक्तिगत औषधि' को सच्चाई बनाने में मानवी सूक्ष्मजीवों का अध्ययन करना।

हमारे शरीर के अंदर वास करनेवाले इन सूक्ष्म मित्रों से हमारा परिचय करवाने के लिए डॉ. मांडे और डॉ. शौचे हम आपके आभारी है।

हिन्दी रूपांतर - स्मिता खडकीकर,
क. हिंदी अनुवादक

विज्ञान के क्षेत्र में महिलाओं का योगदान

आंतर्राष्ट्रीय तौर पर किए गए सर्वेक्षण के अनुसार पूरी दुनिया में अब श्रमकार्य की भागीदारी में महिलाओं की संख्या प्रतिदिन बढ़ रही है। लेकिन ये भागीदारी काफी कम व्यवसायों में केन्द्रीभूत है। और ये भी ऐसे व्यवसाय है जो कम गौरवपूर्ण होने के साथ-साथ, आर्थिक प्रतिफल भी कम देते है। खासकर विज्ञान और तकनीकी क्षेत्रों में तो जैसे महिलाओं के लिए एक कांच की दीवार पाई गई है, जिसमें से वे बहुत उपर तक देख तो सकती है पर वहाँ पर पहुँच नहीं पाती!

भारत जैसे परंपरागत रूढ़ियों का अनुसरण करनेवाले देश में तो महिलाओं का विज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश करना और अपने अनुसंधान कार्य को बिना रुकावट जारी रखना सबसे बड़ी चुनौती है। सिर्फ इच्छाशक्ति और कड़ी मेहनत ही काफी नहीं है बल्कि और भी कई सामाजिक, आर्थिक और भावनात्मक तकलीफों से गुजरने के लिए तैयार रहना पड़ता है।

समाज बदल रहा है, लोगों का नज़रिया बदल रहा है, यह उम्मीद जरूर की जा सकती है कि एक दिन ऐसा भी आएगा जब महिला वैज्ञानिकों की संख्या भी पुरूष वैज्ञानिकों जितनी हो जाएगी। यहाँ पर मैं कुछ ऐसी महान भारतीय महिला वैज्ञानिकों के बारे में बताना चाहती हूँ जिन्होंने पुरूषप्रधान समाज में रहते हुए विज्ञान के क्षेत्र में अप्रतिम सिद्धि को प्राप्त किया। उनके अन्वेषण बहुत ही महत्त्वपूर्ण साबित हुए। यह सामान्य बात नहीं है कि उन्होंने यह सफलता तब हासिल की जब देश में महिलाओं की साक्षरता का प्रमाण काफी कम था। सच तो यह है कि ये विज्ञान जगत के वो अगनतारें है जो कि घनें अंधकार में भी खुद रोशनी बनकर आसमान को छूने की प्रेरणा देते है।

डॉ. शैलजा सिंह
जैवसूचना प्रयोगशाला

इरावती कर्वे

इरावती कर्वे भारत की पहली महिला मानवविज्ञानी थी। उन्होंने इस विषय को तब चुना जब वह अपने प्रारंभिक अवस्था में था। उन्होंने इस विषय का आरंभ किया और यह विषय सबसे पहले पूना विश्वविद्यालय में सिखानेवाली वह पहली व्यक्ति थी। वह एक भारतीय संस्कृति प्रचारक भी थी। लोकसंगीत की संग्राहक और एक स्त्रीवादी कविताओं की अनुवादक भी थी। उन्होंने युगांत नामक अपने किताब में महाभारत की मूलतः पुनःव्याख्या प्रस्तुत की। इससे उनके वाचकों के इस महाकाव्य को समझने में परिवर्तन आया।

इरावती का जन्म 1905 में हुआ और उनका नाम बर्मा में बहनेवाली इरावड्डी नदी से रखा गया जहाँपर उनके पिता गणेश हरि करमरकर काम करते थे। सात साल की उम्र में उन्हें पूना के हुजुरपागा कन्या विद्यालय में भेजा गया। पाठशाला में उनकी शकुंतला परांजपे नामक एक सहपाठी थी जो फर्ग्युसन महाविद्यालय के प्राचार्य रँगलर परांजपे की बेटी थी। शकुंतला की माँ को इरावती तुरंत पसंद आई और उन्होंने उसे अपने दूसरे बच्चे की तरह स्वीकार किया। अपने नए घर में स्फूर्तिदायक बौद्धिक वातावरण का अनुभव लिया और विभिन्न प्रकार के किताबों से उनका परिचय हुआ।

फर्ग्युसन महाविद्यालय में इरावती ने तर्कशास्त्र पढ़ा और 1926 में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। मुंबई विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग के प्रमुख जी. एस. घुरे के निगरानी में काम करने के लिए उन्हें दक्षिण अधिछात्रावृद्धि मिली। इसी दौरान उनकी रसायनशास्त्री दिनकर धोंडो कर्वेसे शादी हुई जो महाराष्ट्र में विधवा पुनर्विवाह और महिलाओं का शिक्षण शुरु करनेवाले महान समाज सुधारक महर्षी धोंडो कर्वे के बेटे थे।

परंतु एक प्रगतिशील परिवार में शादी होना फायदेमंद साबित नहीं हुआ। जबकि महर्षी कर्वेजी ने समाज में महिलाओं के प्रोत्साहित किया लेकिन उनका यह उदारतावाद उनके परिवार में लागू नहीं हुआ। जर्मनी में उच्च शिक्षा पाने के लिए इरावती ने किए हुए प्रयासों का उन्होंने विरोध किया। इस तरह विरोध होने के बावजूद 1928 में इरावती डॉक्टरेट करने के लिए कैसर विल्यम मानवशास्त्र संस्था में गई। उनके प्रबंध का विषय था- मनुष्य के दिमाग की सामान्य असिमिती। इरावती और उनके पति यह समझ गए थे के वह दोंनो सामाजिक सुधारणा के लिए नहीं थे। इसलिए वह दोंनो अनुसंधान और अध्यापन से जुड़े रहे। दिनकर जी रसायनशास्त्र पढ़ाते थे और बाद में फर्ग्युसन महाविद्यालय के प्राचार्य बने। दिनकरजी ने अपने पत्नी की असाधरण बौद्धिक क्षमताएं पहचानी और दृढ़ता से उनका साथ दिया। इरावती अनुसंधान कर सके इसलिए उन्होंने घरेलु जिम्मेदारियाँ संभाली। उनके गाड़ी में पेट्रोल और बटुए में पैसा हमेशा रहे इस बात को वो सुनिश्चित करते थे। वह पूना में स्कूटर चलाने वाली पहली महिला थी। उन्होंने मंगलसूत्र पहनने से और बिंदी लगाने से इन्कार किया। परंपराओं के बारे में उदासीन होने के बावजूद इरावती जी ने एक मध्यम वर्गीय हिंदू जीवन बिताया।

उस वक्त जैसे सारे शिक्षित बच्चे करते थे वैसेही उन्होंने पाठशाला में संस्कृत सिखा। उनके पिता ने उन्हें भांडारकर पूर्व अनुसंधान संस्था से प्रकाशित होनेवाले संस्कृत में लिखे महाभारत के 18 खंडो का तोहफा दिया। उन्हें वह बहुत प्यारा लगा। तद्पश्चात उन्होंने महाभारत पर

आधारित युगांत नामक किताब लिखी। 1967 में इस किताब को साहित्य अकादमी का मराठी की सर्वोत्तम किताब का पुरस्कार मिला। इस किताब में भारतीयों से सदियों से पूजे जानेवाले महाभारत के असाधारण मानवीय पात्रों का तिरस्कारपूर्वक सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है।

जर्मनी से लौटने के बाद इरावती जी ने मुंबई में (1931-36) में एस. एन. डी. टी कन्या विश्वविद्यालय में अभिलेखी के पद पे काम किया। 1939 में वह पूना के पुनर्जीवित डेक्कन महाविद्यालय में समाजशास्त्र विषय के अध्यापक पदपे भर्ती हुए और अपने शेष जीवनकाल में उन्होंने वहींपर काम किया। उस समय डेक्कन महाविद्यालय में वही एक समाजशास्त्री थी, इसका मतलब यह था कि उस विषय के सारे खण्ड उन्हें ही सिखने थे। इससे उनपर बहुत जिम्मेदारी आई।

इरावती उनके कार्य में उनके एम.ए के पर्यवेक्षक जी. एस. घुरे से प्रभावित हुई। भारतीय समाज के आधार में परिवार, नातेदारी, जाति और धर्म के महत्त्व के बारे में उनकी सोच एक जैसी थी। समाज का एक व्यापक चित्र बनाने के लिए जाति और कबिलों का सर्वेक्षण करने में उन्हें दिलचस्पी थी। इरावतीजीं को पूरातात्विक अन्वेषण जैसे नए क्षेत्रों के अनुसंधान के लिए क्षेत्र-कार्य करने का जुनून था और वह अंतरनिहीत रुप से जिज्ञासू थी। उन दिनों महिलाओं को क्षेत्र-कार्य करना आसान नहीं था। स्वयं इरावती कर्वेजी के शब्दोंमे- मेरा अगला कदम कहाँ होगा और अगला खाना कहाँ से आएगा यह बिना जाने मैं इस जगह से उस जगह सफर करती थी। बाकी काम, भोजन का समय, लोगों से भरे बस का सफर और पुरुष तथा महिलाओं से भरे रेल्वे के डिब्बों के बीच रूका था। उन्होंने भौतिक मानवशास्त्र और पुरातत्वविद्यापर काम किया और पाषाणकाल के कंकालों को खोदकर निकाला। उन्होंने नातेदारी, जाति, लोकसंगीत, महाकाव्य और मौखिक परंपरागत कथाओं को दस्तावेज किया। उन्होंने साप्ताहिक बाजार और बांध से विस्थापित लोगों का युगांतकारी सामाजिक अर्थशास्त्रीय सर्वेक्षण किया।

इरावती ने अंग्रेजी में कुल मिलाके 102 लेख और किताबे लिखी। उन्होंने मराठी में भी आठ किताबें लिखी। उनके समकालीन व्यक्तियों में उनका विस्तार न केवल असाधारण था पर बिल्कुल विशिष्ट था। उनके सबसे होनहार विद्यार्थी के. सी. मल्होत्रा ने धनगर (गड़रिया) और नंदीवाला नामक दो बंजारे समूह के मानवीय पर्यावरण के अध्ययन का आरंभिक कार्य संचलित किया। वह अधिकतर छुट्टियाँ सफर में बिताती थी।

उनका मराठी साहित्य किसी बात से संलग्न होकर भी असंलग्न होनेवाले एक नाजूक समतोल का उदाहरण है। पंढरपूर तीर्थयात्रा पर उन्होंने लिखा हुआ अंग्रेजी में अनुवादित ऑन द रोड (रास्तोंपर) निबंध एक जानामाना उदाहरण है। व्यक्तिगत निबंधो के शैली को पुनःप्रचलित करनेवालों में से वह एक है।

इरावती कर्वेजी ने वर्तमान और भूतकाल के संबंध की हमारी समझ को बढ़ाया। वह बहु-सांस्कृतिक, बहु-धार्मिक और बहु-भाषिक अवस्था में एक राष्ट्र को निर्माण करने में आनेवाली परेशानियाँ और उसका महत्त्व इनके बारे में उतनी ही जागरूक थी। उन्होंने कोयना बांध में हुए विस्थापित लोगों का किया हुआ सर्वेक्षण अत्यंत समकालीन संबंध दर्शाता है।

महाकाव्य महाभारत में कुंती और द्रौपदी जैसे औरतों ने जो महसूस किया होगा उसके बारे में उन्होंने औरतों के दृष्टिकोण से संवेदनशीलता से लिखा। सचमुच, नातेदारी और परिवार इन विषयों पर उन्होंने किए आरंभिक कार्य ने कई सारे क्षेत्र खासकर औरतों के अध्ययन क्षेत्र में भावी अनुसंधान की बुनियाद बनाई।

महान सपने देखनेवालों के महान सपने हमेशा पूरे होते है।

-डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम

कमला सोहनी

कमला सोहनी विज्ञान क्षेत्र में डॉक्टरेट की उपाधी पानेवाली पहली भारतीय महिला थी। उन्होंने गाँव के गरीब लोगों द्वारा खाए जानेवाली तीन महत्त्वपूर्ण वर्गों के खाद्यपदार्थों का जैवरासायनिक परीक्षण किया और उनके पोषणसंबंधी मूल्य सिद्ध किए।

कमला का जन्म 1912 में हुआ। कमला के पिता नारायणराव भागवत और चाचा माधवराव उत्कृष्ट रसायनशास्त्री थे। वे बंगळूरस्थित भारतीय विज्ञान संस्था के सबसे पहले स्नातकों में से थे। कमला ने मुंबई विश्वविद्यालय से भौतिक और रसायनशास्त्र में स्नातक उपाधी प्राप्त की। उन्होंने सोचा विश्वविद्यालय में अव्वल आने से उन्हें भारतीय विज्ञान संस्था में अगला संशोधन करने के लिए आसानी से प्रवेश मिल जाएगा।

विख्यात वैज्ञानिक नोबेल पुरस्कृत सर सी. व्ही. रमण जिन्होंने भारतीय विज्ञान संस्था रमण अनुसंधान संस्था में मूलतः योगदान दिया और भारत में शोधपत्रिकाओं के लिए एक मजबूत बुनियाद बनाई, वह महिला छात्र लेने के खिलाफ थे। इसलिए 1933 में रमण ने कमला का आवेदनपत्र विश्वविद्यालय के गुणवत्तासूची में अव्वल होने के बावजूद फौरन रद्द कर दिया। फिर उन्होंने रमण के साथ मुकाबला किया जो बाद में नरम पड़ गए। उनके इस सत्याग्रह के बाद कमला को एक शर्त पर परख-अवधि के लिए प्रवेश दिया गया- वह यह कि उनकी मौजुदगी किसी भी पुरुष वैज्ञानिकों को तकलीफदेह साबित नहीं होगी। इस बात से कमला के मन को बहुत ठेस पहुँची। परंतु इस बात को स्वीकार करने के अलावा उनके पास और कोई रास्ता नहीं था।

उन्होंने इस बात को दोहराया था, एक महान वैज्ञानिक होकर भी रमण बहुत संकीर्ण मन के थे। क्योंकि मैं एक महिला थी, उन्होंने जिस तरीके से मुझसे बर्ताव किया मैं कभी भी भूल नहीं सकती। यहाँ तक की रमण ने मुझे एक नियमित छात्र नहीं माना। यह मेरा बहुत बड़ा अपमान था। उस वक्त महिलाओं के खिलाफ पक्षपात बहुत बूरा था। कोई किसी और से क्या उम्मीद रख सकता है अगर एक नोबेल पुरस्कृत इस तरीके से बर्ताव कर सकता है।

एक साल बाद रमण कमला के ईमानदारी से संतुष्ट हुए और उन्हें जैवरसायनशास्त्र में नियमित रुप अनुसंधान करने के लिए इजाजत दी। इसके बाद उन्होंने महिला छात्राओं को प्रवेश देना शुरू किया। कमला की यह युगांतकारी जीत थी। उनके संघर्ष ने अन्य महत्त्वाकांक्षी महिला वैज्ञानिकों का जीवन काफी आसान बनाया। भारतीय विज्ञान संस्थान में उनके शिक्षक श्री. श्रीनिवासया के निगरानी में उन्होंने कड़ी मेहनत की, जिनका उनपर दृढ प्रभाव था। उन्होंने उन्हे जैवरसायनशास्त्र के महान उस्तादों के बारे में पढने के लिए यहाँ तक की उनके साथ पत्रव्यवहार करने के लिए प्रोत्साहित किया। यहाँ उन्होंने कुपोषित भारत के लिए महत्त्वपूर्ण दूध, दालफली जैसे खाद्यपदार्थोंपर काम किया। 1936 में एक स्नातक छात्र के रूप में वे दालफली के प्रोटीन पर काम करनेवाली पहली व्यक्ति थी। उन्होंने अपना अनुसंधान मुंबई विश्वविद्यालय को पेश किया था और अपनी एम.एससी उपाधी प्राप्त की। फिर वे केंब्रिज विश्वविद्यालय गई और सबसे पहले डॉ. डेरिक रिचर के प्रयोगशाला में काम किया, जिन्होंने उन्हें सुबह काम करने के लिए एक अतिरिक्त मेज प्रदान किया जिसपर वे रात में सोते थे। जब डॉ. रिचर काम के वजह से कहीं बाहर चले जाते थे तब कमला वनस्पति उतकोंपर

अपना काम जारी रखती थी। आलूपर काम करते समय उन्होंने यह ढूँढ निकाला के पौधों के हर एक पेशी में सायटोक्रोम सी मौजूद था जो ऑक्सीकरण में शामिल था। यह एक मूलभूत खोज थी जिसने सारे वनस्पति जगत को समाविष्ट किया था।

उनका महान उस्तादों के साथ काम करने का सपना जल्द ही सिद्ध हुआ, जब उन्हें छात्रवृत्ति मिली। सबसे पहली छात्रवृत्ति नोबेल पुरस्कृत प्रा. फ्रेड्रीक हॉपकीन के साथ केंब्रिज विश्वविद्यालय के सर विल्यम ड्वॉन जैवरसायनशास्त्र संस्था में मिली। यहाँ पर उन्होंने ऑक्सिकरण और रिडक्शन के क्षेत्र में काम किया। दूसरी छात्रवृत्ति एक अमेरिकी अध्येतावृत्ति थी, जिस कारण वे युरोप के प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों से मिली। कमला ने वनस्पती उतकों के श्वसन में सायटोक्रोम सी इस शोध का वर्णन करनेवाला लघुनिबंध केंब्रिज विश्वविद्यालय में अपने डॉक्टरेट उपाधी के लिए प्रस्तुत किया। उनके पूरे डॉक्टरेट अनुसंधान और लेखन के लिए केवल 14 महीने लगे और जो केवल 40 मुद्रलिखित पन्नो से बना था। वे विज्ञानक्षेत्र में डॉक्टरेट उपाधी पानेवाली पहली भारतीय महिला थी।

1939 में वे भारत लोटी और नई दिल्ली में हाल में स्थापित हुए लेडी हॉर्डिंग महाविद्यालय के जैवरसायनशास्त्र विभाग के अध्यक्ष के रूप में काम किया। बाद में वे कुन्नूर के पोषण अनुसंधान प्रयोगशाला की सह-निदेशक बनी। यहाँ पर उन्होंने विटामिनों के असर का अनुसंधान किया। 1947 में उन्होंने श्री. एम. व्ही. सोहनी से शादी की जो पेशे से मुनीम थे और मुंबई स्थानांतरीत हो गए।

वह मुंबई में हाल में शुरू हुए वे (रॉयल) विज्ञान संस्था के जैवरसायनशास्त्र विभाग में शामिल हो गए। उन्होंने अपने छात्रों को उपयुक्त अनुसंधान करने के लिए प्रोत्साहित किया। उनके बहुत से छात्र बादमें प्रतिष्ठित वैज्ञानिक बने। कमला ने छात्राओं के साथ मिलकर गाँव के गरीब जो खाते है उन खाद्यपदार्थों का जैवरासायनीक परीक्षण किया और उनके पोषणसंबंधी मूल्य सिद्ध किए। इस अध्ययन में दालफली प्रोटीन्स, ट्रिप्सिनबाघक पदार्थ और अन्य घटक शामिल थे। जो भारतीय दालफली, नीरा, ताड़का गुड़ और ताड़का गुडरस और छिलके का आटा (चावल पीसते समय और चमकाते समय बननेवाला) की पचयनता कम करते है। उनके अनुसंधान के विषय भारतीय सामाजिक जरुरतों के लिए बहुत उपयुक्त थे क्योंकि, यह खाद्यपदार्थ सबसे गरीब लोगों द्वारा खाए जाते है। भारत के पहले राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद के सुझाव से उन्होंने उनका नीरा पे आरंभिक काम शुरू किया। नीरा ताड़ के विभिन्न उपजाति के पुष्पपुंजो से निचोड़ा हुआ रस है। ये मधुर और बहुत पौष्टिक होता है। कबीलों के किशोरावस्था के बच्चे और गर्भवती महिलाओं के आहार में नीरा का समावेश उनके संपूर्ण स्वास्थ्य के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण रहा। नीरा के पोषण मूल्यों का आरंभिक काम करने के लिए कमला सोहनी को राष्ट्रपति पुरस्कार मिला।

वे भारतीय उपभोक्ता मार्गदर्शन समिति (सी.जी.एस.आय) की अध्यक्ष चुनी गई। यह बात 1982-83 की है जब वे सी.जी.एस.आय की एक सक्रिय सदस्य थी, जहाँ उन्होंने दुगने जोश के साथ काम किया। उन्होंने उनकी पत्रिका 'किंमत' में उपभोक्ता की सुरक्षा पर बहुत लेख लिखे।

हालाकि वे अपने अनुसंधान कार्य से खुश थी पर कमला संस्था में होनेवाले इर्ष्या और राजनीति को लेकर अत्यंत परेशान थी जहाँ उन्हे कई सालों तक निदेशक पद नकारा गया। उन्होंने अपने कामयाब वैज्ञानिक जीवन का श्रेय अपने पिता, गुरू-श्रीनिवासया और प्रियतम पति को दिया।

आखिर में जब वे निदेशक बनी, डॉ. डेरिक रिचरने (उनके केंब्रिज के सबसे पहले मार्गदर्शक) यह कहा कि, उन्होंने इतने बड़े विज्ञान संस्थाकी पहली महिला निदेशक बनने का इतिहास रचा है। कमला सोहनी जी का 1998 में अपनी 86 साल की उम्र में निधन हुआ।

■■

दूसरों को समर्थ बनाने के प्रयास में अच्छी बात यह है कि इस प्रक्रम में खुद का प्रभाव व शक्ति जरा भी कम नहीं होते।

-बार्बरा कलरोज़

अण्णामणी

1950 में जब होमीभाभा आण्विक उर्जा का बुनियादी ढाँचा बना रहे थे तब अण्णामणी स्त्रीवादी समझ सौर और पवन उर्जा खोज रही थी। स्वतंत्र भारत के मौसम विज्ञान में मणी ने शानदार योगदान दिया।

अण्णा मोडयिल मणी का जन्म 23 अगस्त, 1918 में केरला के पीरमेडू में हुआ । उनके पिता के पास इलायची की बहुत बड़ी रियासत थी। सिरियन ख्रिस्ती वंश से होने के बावजूद वो एक कट्टर नास्तिक थे। अण्णा को किताबों में बहुत रुचि थी और अपने बारह साल की उम्र में उन्होंने एक स्थानिक पुस्तकालय की लगभग सारी किताबें पढ़ ली थी। उन्होंने अपने आठवे जन्मदिन पर हिरोंकी बालियों से इनकार किया और उनकी जगह 'ब्रिटनिका विश्वकोश' चुना। किताबों ने उनके लिए नई दुनिया खोल दी। 1925 में गांधीजी का उनके मूलनिवास पर आना अण्णापर बहुत प्रभावशाली रहा। अपने बहनों की तरह शीघ्र शादी करने के बदले उन्होंने उच्च शिक्षा पाना पसंद किया। उन्होंने अपने पूरे जीवनकाल में 'खादी' पहनी। अण्णा को औषधशास्त्र पढ़ना था पर बादमें उन्होंने भौतिकशास्त्र को चुना क्योंकि वे उसमें कुशल थी। मद्रास के प्रेसीडन्सी कॉलेज से उन्होंने भौतिकशास्त्र में हॉनर्स की उपाधि ली। उनके महाविद्यालयीन दिनों में वे समाजवादी विचारों की तरफ खिंची चली गई। 1940 में बंगळूर की भारतीय विज्ञान संस्था में सी.व्ही. रमण के निगरानी में संशोधन करने के लिए छात्रवृत्ती प्राप्त की। यहाँ पर उन्होंने हिरों और माणिकों की प्रतिदीप्ति अवचूषण आदि को अंकीत कर स्पेक्ट्रोस्कोपी पर काम किया। क्योंकि उनके पास विशारद उपाधि नहीं थी उन्हें डॉक्टरेट उपाधि नहीं दी गई जिसके लिए वे उचित रूप से पात्र थी। सौभाग्यवश डॉक्टरेट का शोधनिबंध ना होना उन्हें आगे बढ़ने से रोक नहीं सका।

तत्पश्चात इंग्लैंड में प्रशिक्षण के लिए उन्हें एक सरकारी छात्रवृत्ति से सम्मानित किया गया। 1945 में अण्णामणी लंडन के इम्पेरिअल कॉलेज में एक सैनिक पोत पें भौतिकशास्त्र की शिक्षा पाने के लिए गई थी, मगर मौसम विज्ञान के यंत्रीकरण में स्थावर हो गई। यहाँ पे उन्होंने मौसम से संबंधित यंत्र के अंशाकन और प्रमाणीकरण की पद्धति सिखी। 1930 में भी जब मणी महाविद्यालय में गई उस वक्त भी महिलाओं को विज्ञान क्षेत्र चुनने के अवसर बहुत सीमित थे। उस वक्त वहाँ महिलाओं के शिक्षा को लेकर यही मतैक्य था कि उनके लिए माता और गृहिणी की भूमिका ध्यान रख शिक्षा की रचना की जानी चाहिए।

स्वतंत्र भारत ने काफी सारे अवसर प्रदान किए। 1948 में पूना स्थित भारतीय मौसम विज्ञान विभाग के यांत्रिक प्रभाग में प्रवेश लिया जो कि उस वक्त एस.पी. व्यंकटेश्वरन नामक एक असीमित, उर्जादायी, स्वप्नदर्शी से शिरोभूषित था। 1947 के पहले उष्णमापक और वायुदाबमापक जैसे साधारण उपकरण भी आयात होते थे। राष्ट्रवादी होने के कारण व्यंकटेश्वरन उन्हें भारत में बनाना चाहते थे। उन्होंने वर्षामापक, बाष्पीकरणमापक, उष्णमापक, वायुवेगमापक, वायुदिशादर्शक जैसे उपकरण बनाने के लिए सुस्पष्टतादर्शक यंत्रों के साथ एक कार्यशाला स्थापन की। उन्होंने तापलेख, जलालेख जैसे स्वयंअंकित करने वाले उपकरण विकसित करना शुरू किया। अण्णामणी इन सबसे प्रेरित हुई थी और नए से प्राप्त की हुई कुशलता और अपने सपनों को वे भारत को कम से कम समय में मौसम संबंधित

उपकरण बनाने में स्वावलंबी बनाने में इस्तेमाल करना चाहती थी। जटील उपकरणों का संचलन करनेवाला प्रशिक्षित मनुष्यबल ना होने के कारण यह आसान नहीं था। उन्हें उस वक्त जो भी मौजुद था उससे कार्य निभाना पड़ा था। उन्होंने अपने निगरानी में 121 पुरूषों को उनका सर्वोत्तम देने के लिए प्रेरित किया। कुछ भी करने का बेहतर तरीका ढूँढो यही उनका उद्देश्य था। गुणवत्ता के लिए उन्होंने कभीभी प्रमाण के साथ समझौता नहीं किया। वह एक अत्यधिक सक्रियता का दौर था और जल्द उन्होंने भारतीय संशोधक और अभियंताओं के कार्य को आगे बढ़ने के लिए एक मूलभूत संघ बनाया।

अण्णामणी जी ने मौसम संबंधित उपकरणों के लगभग 100 रेखाचित्रों को प्रमाणित किया और उनका उत्पादन शुरू किया। भारत जैसे उष्णकटीबंधीय देश के लिए सौरउर्जा के रूप में एक पर्यायी स्रोत में उन्हें अत्याधिक दिलचस्पी थी। परंतु भारत में सौरउर्जा के मौसमी और भौगोलिक विभाजन से संबंधित आधार सामग्री बहुत सीमित थी। उन्होंने आंतर्राष्ट्रीय भू-भौतिकीय वर्षकाल में (1957-58) भारत में सौस्विकिरण का मापन करने हेतु केंद्रो का समुह स्थापन किया। शुरू में पहले आयातित उपकरणों का इस्तेमाल किया गया था परंतु जल्द ही मणी ने सभी प्रकार के विकीरण उपकरणों की रूपरेखा और उत्पादन का भार उठाया।

मणी का यह विश्वास था कि गलत माप, माप ना होने से ज्यादा बुरा है। वे हमेशा उचित रेखाचित्र और अचूक अंशाकन पर दृढ रहती थी। 1960 में उन्होंने ओझोन वायु पर काम करना शुरू किया- एक ऐसा शब्द जो उस वक्त ज्यादा मशहूर नहीं था। पृथ्वीपर सारे जीवित रूपों पर रक्षाकवच बनाए रखने जैसा ओझोन से किया जानेवाला महत्त्वपूर्ण कार्य महज दो दशकों के बाद रोशनी में आया। उन्होंने ओझोन मापन करने के लिए 'ओझोनमापक' उपकरण का विकास करने का बीड़ा उठाया। इससे भारत ओझोन के बारे में बहुत विश्वसनीय जानकारी प्राप्त करने में सक्षम हुआ। मणी के इस इकलौते योगदान के वजह से उन्हें आंतर्राष्ट्रीय ओझोन आयोग का सदस्य बनाया गया।

1963 में, विक्रम साराभाई के आवेदन पर उन्होंने थुंबाके रॉकेट प्रक्षेपण सुविधा केन्द्र पर सफलतापूर्वक मौसम विज्ञान की वेधशाला और यांत्रिकीकरण टॉवर की स्थापना की। 1976 में अण्णामणी भारतीय मौसम विज्ञान के उपनिदेशक के तौर पर निवृत्त हुई। बादमें उन्होंने बंगळूर के नंदी पहाड़ी पर मिलीमीटर तरंग-दूर्बीण की स्थापना की। सौर उष्णता प्रणाली से जूड़े हुए अभियंताओंके लिए उनकी दो किताबें 'भारत के लिए सौर विकीरण आधार सामग्री की पुस्तिका' (1980) और 'भारत के उपर फैला सौर विकीरण' (1981) प्रमाणित संदर्भ मार्गदर्शक बन चुकी है। एक स्वप्नदर्शी के बतौर वे भारत का वायुउर्जा का सामर्थ्य जान चुकी थी। और सालभर उन्होंने 700 जगहों पर सबसे बेहतर उपकरणोंसे वायुमापनों का सुनियोजन किया। आज भारत पूरे देश में वायुसंबंधित फार्म्स स्थापन करने में अग्रसर बना है, जिसके श्रेय का एक हिस्सा अण्णामणी को जाता है।

कई सालोंतक मणी ने बंगळूर में एक निजी उद्योग का नेतृत्व किया, जहाँ पे वायुगति और सौरउर्जा मापनेवाले उपकरण बनाए जाते थे। मणी ने कभी शादी नहीं की। निसर्ग के प्रति उनकी आवेशपूर्ण चाहत थी और प्रकृति में घुमना और पंछीओंका अवलोकन करने से उन्हें बहुत लगाव था। वे बहुत से विद्वत्तापूर्ण शैक्षणिक संस्था की सदस्य थी- जैसे कि भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान परिषद, अमरिकी मौसम विज्ञान संस्था और आंतर्राष्ट्रीय सौर उर्जा संस्था इत्यादी। उन्हें आयएनएसए- के. आर. रामनाथन मेड़ल मिला (1987)। 1994 में उन्हें दिमागी पक्षाघात हुआ जिसने उन्हें उनके शेष जीवनकाल में गतिहीन कर छोड़ा। 16 अगस्त, 2001 को तिरूवनंतपुरम में वे गुजर गई।

किसी न किसी प्रकार से आलोचना तो होती है, फिर अपने दिल की क्यों न सुने?
-एलेनर रूझवेल्ट

आसिमा चैटर्जी

आसिमा चैटर्जी का जन्म 23 सितम्बर, 1917 को पश्चिम बंगाल में हुआ था। वे कलकत्ता में पली-बड़ी और वही पर उन्होंने अपनी शिक्षा ली। आसिमा ने 1938 में कलकत्ता विश्वविद्यालय से अनुस्नातक की पदवी कार्बनिक रसायनशास्त्र को मुख्य विषय लेकर प्राप्त की। श्रीमान पी. के. बोस जो कि भारत में सबसे पहले प्राकृतिक उत्पाद के रसायनशास्त्री थे उनके मार्गदर्शन में उन्होंने 1944 में अपनी डॉक्टरेट ऑफ सायन्स की उपाधि हासिल की। किसी भी भारतीय विश्वविद्यालय से डॉक्टरेट ऑफ सायन्स की उपाधि प्राप्त करनेवाली वह पहली महिला थी।

आसिमा ने एल. झेवमेस्टर के साथ मिलकर अमरिका के एस. एम. पार्क्स विश्वविद्यालय में प्राकृतिक रूप से उपलब्ध ग्लायकोसाईड्सपर (1947), पॉल केरर के साथ अमरिका के केलिफोर्निया इन्स्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी में केरोटीनोईड्स और प्रोविटामिन्स पर (1948-49) और झुडीच के एन. एल. विश्वविद्यालय में जैविक रूप से सक्रिय आल्कलोइड्स पर काम किया (1949-50) और फिर यही विषय उनका सबसे प्रिय विषय बन गया जिस पर उन्होंने जीवनभर काम किया। 1950 में भारत वापस लौटने के बाद बड़े उत्साह से उन्होंने देशी औषधीय वनस्पति की रासायनीक संरचना और खास करके आल्कलोईड्स और कूमेरिन्स का विस्तृत अध्ययन शुरू किया।

1954 में उनको कलकत्ता विश्वविद्यालय के आधारभूत रसायनशास्त्र के विभाग में पाठक के रूप में नियुक्त किया गया, और फिर वह आखिर तक वहीं स्थायी रहीं। 1962 में उनको रसायनशास्त्र के खैरा प्राध्यापक के पद पर नियुक्त किया गया जो कि कलकत्ता विश्वविद्यालय में एक बहुत ही प्रतिष्ठित और गौरवपूर्ण पद माना जाता है, उन्होंने 1982 एक इस पद को विभूषित किया, भारत के किसी भी विश्वविद्यालय में इस पद तक पहुँचनेवाली पहली महिला वैज्ञानिक थी।

1972 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा संस्वीकृत एक विशेष सहायता कार्यक्रम में बतौर मानद समन्वयक उन्होंने शिक्षण और अनुसंधान को घनीभूत करने की दिशा में सराहनीय कार्य किया जिसको बाद में 1985 में सेन्टर ऑफ एडवान्स स्टडीज ऑन नॅचरल प्रोडक्ट्स द्वारा भी मान्यता प्राप्त हुई।

उनके अथक प्रयत्नों के कारण ही वे प्रादेशिक अनुसंधान संस्थान स्थापित करने में सफल हुई, और यही उनके जीवन का सबसे बड़ा स्वप्न था। इस संस्थान में उन्होंने देशी औषधीय वनस्पति पर अन्वेषण कार्य करते हुए नई आयुर्वेदिक दवाईयों की खोज करना शुरू किया। इस संस्थान के साथ में ही उन्होंने एक आयुर्वेदिक अस्पताल की भी स्थापना की जहां पर अद्वितीय केन्द्र-राज्य सहयोग से चिकीत्सीय परीक्षण भी किए जाते थे। उन्होंने जीवनभर इस संस्थान के समन्वय प्राचार्य बनकर इस संस्थान का परिपोषण किया।

चैटर्जी ने आयुष-56 जैसी अपस्मार विरोधी और कुछ मलेरिया विरोधी दवाईयों का निर्माण किया, जो कि आयुर्वेदिक उपचार में खास मानी जाती है। कुछ कंपनियों

ने इनका निर्माण करके उनका विक्रय करना भी शुरू किया।

उनके आल्कलोईड्स, कूमेरिन्स और टर्पिनोईड्स पर किए गए कार्य का औषधीय रसायनशास्त्र में बहुत बड़ा योगदान रहा। इसके साथ ही उन्होंने विश्लेषणात्मक रसायनशास्त्र और यंत्रवत कार्बनिक रसायनशास्त्र जैसे विषयों में भी महत्त्वपूर्ण संशोधन किए। उन्होंने राष्ट्रीय एवं आंतर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में 400 से भी ज्यादा शोधलेख प्रकाशित किए और इससे भी ज्यादा समीक्षात्मक लेख प्रकाशित किए। उनके प्रकाशन व्यापक रूप से उनके कार्य को उद्धृत करते है और जिनको कई सारी पाठ्यपुस्तकों में भी सम्मिलित किया गया है।

चैटर्जी ने भारतीय बनौषधि के छः खंड़ों का संपादन और पुनरीक्षण का कार्य किया जो कि कलकत्ता विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित किए गए। वे 'ट्रिअटाईस ऑफ इन्डियन मेडिसीनल प्लान्ट्स'के भी छः अंकों की श्रेणी के मुख्य संपादक थे जिनको सी.एस.आई.आर द्वारा प्रकाशित किया गया।

वे भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी की निर्वाचित अध्येता थीं (1960)। उनको 1961 में शांतिस्वरूप भटनागर पारितोषिक और 1975 में पद्मभूषण जैसे प्रतिष्ठित पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उनको 1975 में इन्डियन सायन्स काँग्रेस असोशिएशन के अध्यक्ष के रूप में चुना गया। इस पद पर निर्वाचित की जानेवाली वे पहली महिला थी। उनका नाम राष्ट्रपति द्वारा राज्यसभा के सदस्य के रूप में निर्दिष्ट किया गया और उन्होंने इस पद पर फरवरी 1982 से मई 1990 तक बहुत ही प्रशंसनीय कार्य किया।

औषधीय वनस्पति के प्रति उनकी यह अप्रतिम रूचि उनके पिताजी की देन थी, जो कि एक चिकित्सा से जुडे इन्सान होने के साथ-साथ अव्यवसायी रूप से एक वनस्पतिशास्त्री भी थे। अपने अनुस्नातक अभ्यास के दौरान वे कई श्रेष्ठ शिक्षकों और शिक्षाविदों के संपर्क में आई, जैसे कि- आचार्य पी., सी. रॉय, पी. सी. मित्र, पी. बी. सरकार, जे. एन. मुखर्जी, पी. के. बोस और जे. सी. बर्धन इन सबने उनको अपनी भविष्य योजना को लेकर बड़ी ही प्रभावित किया।

उनके कार्यकाल के शुरूआती दौर में उन्होंने बहुत ही कम उपकरणोंवाली विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला में काम किया, जहाँ पर्याप्त मात्रा में रसायन भी नहीं थे और बहुत ही अल्प वित्तीय सहायता प्राप्त होती थी। इसलिए उनको कभी-कभी ना ही सिर्फ रसायनों और उपकरणों के लिए बल्कि विदेश में किए जानेवाले अतिसामान्य स्पैक्ट्रल विश्लेषणों के लिए भी खुद पैसे देने पड़ते थे।

इस कठिन समय के दौरान उनको प्रा. सत्येन बोस, मेघनाथ साहा, एस. के. मित्रा, बी. सी. गुहा और सर जे. सी. घोष और कलकत्ता विश्वविद्यालय के बाकी कुलपति के द्वारा भी बहुत प्रोत्साहन मिला। और उनके पति प्रा. बरदानंदा चैटर्जी जो खुद एक जाने-माने भौतिक रसायनज्ञ और बंगाल इंजीनियरींग कॉलेज के उप-प्राचार्य थे उन्होंने हर कदम पर उनका साथ दिया। अत्यंत सफल होने के बावजूद भी वे अपने कार्य से संतुष्ट नहीं थे, उनको और भी कड़ी मेहनत करनी थी। वे कभी भी अपने कार्य की गुणवत्ता के साथ समझौता नहीं करते थे। उन्होंने कहा था कि मैं जब तक जीवित रहूँ, तब तक कार्य करते रहना चाहती हूँ, इसी विचार में उस उत्तम आत्मा के विचार और कार्यप्रणाली प्रतिबिंबित हो जाते है। 2006 में कलकत्ता में उनका निधन हुआ।

रातोरात सफलता के लिए,
कई वर्षों का दिन-रात का
परिश्रम जिम्मेदार होता है।

- एडी केन्टर

एदावलेथ कक्कट जानकी अम्मल

जानकी का जन्म 1897 में केरला के तेल्लीयेरी में एक सुसंस्कृत मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था। उनके पिताजी एक उप-न्यायाधीश थे। जानकी के छः भाई और पाँच बहनें थी। तेल्लीचेरी में पाठशाला की शिक्षा लेने के बाद वे मद्रास आ गई जहाँ पर उन्होंने क्वीन मेरीज़ कॉलेज में से स्नातक की पदवी और प्रेसिडन्सी कॉलेज में से वनस्पतिशास्त्र में ऑनर्स की उपाधि प्राप्त की। बाद में वे मद्रास की विमेन्स क्रिश्चन कॉलेज में पढ़ाती थी। बार्बर स्कॉलर होते हुए उन्होंने फिर अमरीका की मिशिगन महाविद्यालय से 1925 में अनुस्नातक की पदवी प्राप्त की। भारत लौटने के बाद उन्होंने पहली पूर्वीय अध्येता होते हुए वे फिर से मिशीगन गई और 1931 में डॉक्टर ऑफ सायन्स की उपाधि प्राप्त की। वापस लौटने के बाद उन्होंने त्रिवेद्रम के महाराजाज़ कॉलेज ऑफ सायन्स में वनस्पतिशास्त्र की प्राध्यापक बनी और 1932 से लेकर 1934 तक वही पर काम कर रही थी। 1934 से 1939 तक उन्होंने कोईम्बतूर के शुगरकेन ब्रिडींग इन्स्टिट्यूट में आनुवंशिकीविद् के रूप में काम किया। 1940 से 1945 तक उन्होंने लंडन के जोन इन्स होर्टीकल्चरल इन्सिटयूट में बतौर सहायक कोशिकाविज्ञानविद् काम किया। 1945 से लेकर 1951 तक उन्होंने विस्ली में रॉय होर्टीकल्चर सोसायटी में मुख्य कोशिकाविज्ञानविद् के रूप में काम किया।

1951 में जानकी जवाहरलाल नेहरू के निमंत्रण पर भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण का पुन:निर्माण करने के लिए स्वदेश वापस लौटी। तबसे लेकर उन्होंने सरकारी क्षेत्र के विविध अधिष्ठानों में काम किया जैसे कि इलाहबाद की केन्द्रीय वनस्पति प्रयोगशाला के प्रमुख के रूप में और जम्मु के प्रादेशिक अनुसंधान प्रयोगशाला के विशेष अधिकारी के रूप में काम किया। उन्होंने थोड़े समय के लिए ट्रोम्बे के भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में भी काम किया। फिर वे मद्रास में स्थायी हो गई, जहाँ पर उन्होंने मद्रास युनिवर्सिटी के सेन्टर फॉर एडवान्स स्टडी इन बॉटनी में बतौर मानद विज्ञानी के रूप में काम किया। बाद में वे सेन्टर्स फिल्ड लेबोरेटरी से अपने जीवन के आखिरतक (1984) तक जुडी रही।

अम्मल भारतीय विज्ञान अकादमी (1935) और भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी (1957) की निर्वाचित सदस्य थी। मिशिगन महाविश्वविद्यालय ने उनको 1956 में एल.एल.डी. की मानद उपाधि से नवाज़ा। 1957 में भारत सरकार ने उनको पद्मश्री से पुरस्कृत किया। 2000 में भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय विभाग ने वर्गीकरण विज्ञान में दिए जानेवाले राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया।

भारत के बाकी हिस्सों के मुकाबले केरला के मातृवंशीय परिवारों में स्त्रियों को ज्यादा स्वतंत्रता और विशेषाधिकार दिए जाते है। अम्मल के परिवार जैसे कई परिवारों में लड़कियों को बौद्धिक कार्य एवं ललित कला से जुड़ने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। अम्मल ने पेड़-पौधों से अनुराग के साथ ही जन्म लिया होगा तभी तो उसने वनस्पतिशास्त्र के अभ्यास को चुना और मद्रास गई। समय के साथ-साथ अम्मल का प्रकृति की ओर झुकाव बढ़ता ही गया और इसी जुनून ने उनको सफलता की ज़ई ऊँचाईयों पर पहुँचाया।

उनका जीवन उन्होंने अपने व्यवसाय को लेकर या फिर अपने ध्येय को लेकर किए गए परीक्षणों को

प्रतिबिंबित करता है। पहले वे शिक्षक बनी लेकिन इस व्यवसाय से ज्यादा खुश ना होते हुए उन्होंने अनुसंधान कार्य को अपना व्यवसाय बनाया। उनकी मिशिगन की दो पारियाँ उनका निपुणता का विषय चुनने में निर्णायक साबित हुई। उन्होंने कोशिका विज्ञान को उन रचनात्मक वर्षों में चुना था जब इस क्षेत्र की व्यापकता सिर्फ कोशिका केन्द्र और गुणसुत्रों तक ही थी। पिछली सदी के शुरूआती दशकों में जनन-विज्ञान में काफी सारा बुनियादी कार्य हुआ था, खास कर गेहूँ और गन्ने पर। इसी दौर में अम्मल ने शिक्षणकार्य छोड़ा था और कोईम्बतूर के अनुसंधान संस्थान से संलग्न हुई। जहाँ पर उन्होंने आंतरजातीय विलक्षणताओं को सम्मिलित करके कई वर्णसंकर नई जातियाँ बनाई। जिनकी कई सारी खास विशेषताएं थी। उनको कई सारी बागायती प्रजातियों पर गुणसुत्रों को लेकर किए गए कार्य का वर्षों का अनुभव था और इसी अनुभव को साथ लेकर उन्होंने किए हुए गुणसुत्रों की संख्या और प्लोईडी से संबंधित कार्य ने विविध प्रजातियों और विविध किस्मों की उत्क्रांति पर रोशनी ड़ाली। 'द क्रोमोझोम एटलास ऑफ कल्टीवेटेड प्लान्ट्स' जो उन्होंने सी. डी. डार्लिंग्टन के साथ मिलकर लिखा, वो उन्होंने विविध प्रजातियों पर किए हुए कार्य का संग्रह है।

इंग्लैड में जो पोलिप्लोइडी और वनस्पति की उत्क्रांति पर उन्होंने कार्य शुरू किया था वो भारत आने के बाद भी जारी रहा। अम्मल ने अब कुछ महत्त्वपूर्ण वनस्पतियों पर कार्य करना शुरू किया जैसे कि सोलेनम, धतुरा, मेंथा, सिम्बोपोगोन और डायोस्कोरिया और भी कई सारे। उन्होंने अपने अनुसंधान में प्रजातिकरण के कारण खोजने पर भी ध्यान दिया और वनस्पति विविधीकरण के क्षेत्र में अर्थपूर्ण योगदान दिया।

अपनी निवृत्ति के बावजूद भी अम्मल ने बिना रूके अपना कार्य जारी रखा। उन्होंने औषधीय वनस्पति और जातीय वनस्पतिशास्त्र के क्षेत्र में अपना ध्यान केन्द्रीत किया। साथ ही उन्होंने अपने अनुसंधान के मूलरूप परिणामों को प्रकाशित करना जारी रखा। 'द सेन्टर ऑफ एडवान्स स्टडी फिल्ड लेबोरेटरी', जहाँ पर वह रहती थीं और काम करती थीं, वहाँ उन्होंने बड़े ही उत्साह और समर्पण से औषधीय वनस्पति के उद्यान को विकसित किया था। कोशिका विज्ञान उनकी शिक्षा और अनुसंधान का प्रमुख विषय होने के बावजूद भी उनके कार्य ने जननविद्या, उत्क्रांतिविद्या, वानस्पतिक भूगोल और जातीय वनस्पतिशास्त्र जैसे कई क्षेत्रों को छुआ है।

उनके जीवन और कार्यों को देखकर कहा जा सकता है कि वो साहसी होने के साथ-साथ समायोजित थी इसलिए वो जब भी जहाँ भी गई, वहाँ उन्हें अप्रतिम सफलता मिली। प्रकृति के प्रति अनुराग को ही उन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य, उद्देश्य और ध्येय बना लिया। वे आखिरतक अपने ध्येय सिद्धि में लगी रहीं और बाकी सारी चीजों को उन्होंने अनदेखा कर दिया। फसल देनेवाले पौधे, बगीचे के पौधे, औषधीय वनस्पति, जंगली वनस्पति और सारी जाति, प्रजाति और अन्य प्रकार की वनस्पति बस यही उनकी रूचि के विषय थे। जो भी चीजें हाथ में थी या पहुँच के भीतर थी उसी पर उन्होंने काम किया। अंग्रेजी एवं उष्णदेशीय वनस्पति से सुपरिचय का उनके कार्य में बहुत बड़ा लाभ हुआ।

उन्होंने अपना पूरा जीवन बड़े ही सादगीपूर्ण तरीके से अपने ध्येय को सिद्ध करने में अकेले ही बिताया। उनकी जरूरतें बहुत ही कम थी। वे आंतरिक रूप से अपरंपरागत और आडंबरहीन थीं। वे आदतों और पोशाक के मामले में पूरी तरह से भारतीय थी। उनकी जीवनशैली में गांधीवाद की झलक खास दिखाई पड़ती थी। उनपर ना ही किसी की कृपादृष्टि थी और ना ही उन्होंने कभी प्रसिद्धि की कामना की फिर भी कई सम्मान उनको बिना माँगे ही मिल गए। वह सच में एक महान विज्ञानी थीं। 1956 में मिशीगन महाविद्यालय ने उनको जो एल. एल. डी की उपाधि प्रदान की उसमें उनके वनस्पतिशास्त्र और कोशिकाजननविज्ञान में किए हुए योगदान का उल्लेख करते हुए लिखा गया कि, वे उनके श्रमसाध्य और यथार्थ अवलोकनों के लिए वाकई पूजनीय है। उनके धैर्यवान प्रयास विज्ञानी कार्यकरों के लिए एक महत्त्वपूर्ण और समर्पित आदर्श प्रतिरूप है।

जीवन जीने की उनकी अपनी एक महान परिभाषा थी, जिसमें सदाचार के साथ-साथ प्रकृतिप्रेम और विज्ञान के लिए उत्साह भी सम्मिलित थे। उनके जीवन और उनके कार्यों में से बहुत कुछ हमारे लिए अनुकरणनीय है।

दर्शन रंगनाथन

दर्शन रंगनाथन का जन्म 4 जून, 1941 को हुआ था और बिल्कुल उसी दिन 4 जून, 2001 में कैंसर के कारण उनका निधन हुआ। तब उनकी उम्र बराबर साठ साल की थी। वो जैसे कि रासायनीक क्षितीज पर चमकता हुआ धुमकेतु तारा थी। उनकी प्रतिभा का तेज वाकई में विलक्षण था और वे अपनी तरक्की के शीर्षबिंदु पर पहुँचकर फिर गायब हो गई।

हमेशा कीमती कांजीवरम साडी पहने हुए और माथे पर बडी लाल बिंदी के साथ वे इतने सुरुचिपूर्ण दिखती थी कि, एक बार बेंगालुरू के एक परिसंवाद में उनके व्याख्यान के बाद एक जर्मन प्राध्यापक ने कहा कि उनको देखकर मुझे हिन्दु देवियों का स्मरण होता है। उनकी शांत गरिमा, सौहार्द, विनम्रता, समभाव और धैर्यवान प्रकृति सच में अद्वितीय थी।

उनकी मृत्यु के समय उनको भारत की सबसे प्रतिभावान कार्बनिक रसायनशास्त्री माना जाता था क्योंकि उन्होंने पीछले पाँच सालों में कई आंतर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में उनके बहुत सारे शोध लेख प्रकाशित हुए थे। उनके कई चिरस्मरणीय लेख तो मरणोपरांत प्रकाशित हुए। वे भारतीय विज्ञान अकादमी के निर्वाचित अध्येता थी। उनको कई बड़े पुरस्कार मिले जिनमें से विश्व विज्ञान अकादमी का तीसरा पुरस्कार सबसे आखिरी था। ये पुरस्कार उनको उनके जैवरसायनशास्त्र में किए हुए विशिष्ट संशोधन कार्य के लिए प्रदान किया गया। इसके अलावा उन्होंने आण्विक रूपरेखा बनावट, चावीरूप जैव प्रक्रियाओं का रासायनीक अनुकरण, कार्यात्मक वर्णसंकर पेप्टाईड्स का संश्लेषण और नैनोट्यूब संश्लेषण जैसे महत्त्वपूर्ण खोजकार्य किए।

ये उपलब्धियाँ बहुत माईने रखती हैं, खासकर उस महत्त्वकांक्षी महिला के लिए जिसे हर कदम पर पुरूषों के साम्राज्यवाले विज्ञानक्षेत्र में कई संघर्षों का सामना करना पड़ा हो। पर अपने अन्वेषण कार्य को ढ़ाल बनाकर वे ये सब प्रहारों से बचती रही।

दर्शन को बचपन में नृत्य, गायन और चित्रकला का बड़ा शौक था। उन्होंने दिल्ली में अपनी शिक्षा ली थी और प्राध्यापक टी. आर. शेषाद्री के मार्गदर्शन में उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय से अपनी डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। इस दौरान उन्होंने दिल्ली के मिरान्डा कॉलेज में व्याख्याता के तौर पर काम किया और रसायनविज्ञान विभाग के प्रमुख पद पर पहुँची। उनकी शैक्षणिक सिद्धियाँ विशिष्ट थीं। उन्होंने फिर प्राध्यापक जी. एच. आर. बार्टन के समुह में रहकर अपना पोस्टडॉक्टरल अन्वेषण कार्य किया।

1970 में उनका विवाह हुआ और इसी साल में कानपुर के भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान में अपना स्वतंत्र अनुसंधान कार्य शुरू कीया। समस्याओं को समझने की उनकी समझ सही में अलौकिक थी। रसायनविज्ञान शिक्षण में उनका प्रदान चिरस्मरणीय है। उन्होंने रसायनशास्त्र पर कई पुस्तकें लिखी और उनके द्वारा संपादित 'करंट ऑर्गेनिक केमिस्ट्री हाईलाईट्स' को पढ़कर युवा कार्बनिक रसायनशास्त्री की पुरी एक पीढ़ी बड़ी हुई है।

ऐसे अद्भुत व्यक्ति के जीवन के अंत इतना जल्दी और इतने कष्टमय तरीके से आना विधि की वक्रता ही है। 1997 में उनके स्तन कैंसर का पता चला। उनकी नियमित जाँच

होती रही और उन्होंने कई सारी चिकित्सा ली। लेकिन ये सब व्यर्थ साबित हुआ। और अपने जन्मदिन के दिन ही जो की उनकी शादी की भी वर्षगाठ थी, उसी दिन उनका देहांत हुआ।

दर्शन ने एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्थापित किया। अपनी राह में आनेवाली अतिरिक्त बाधाओं के बावजूद भी खुद को साबित करनेवाली महत्त्वाकांक्षी महिलाओं के लिए दर्शन एक आदर्श है।

अपने जीवन के अंत तक उन्होंने शारीरिक कष्टों के बावजूद जरा भी कटुता लाए बिना कड़ी मेहनत की। फिर भी उनके चेहरे पर हंसी और रगों में जोश था, ये बात बहुत ही खास है।

दर्शन को श्रद्धांजली देते हुए भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी ने द्विवार्षिक व्याख्यान का आयोजन करना शुरू किया है। जिससे उनके जैसी प्रतिभावान महिलाओं को प्रेरणा मिलेगी।

आप इतने वृद्ध कभी नहीं होते है कि एक नए लक्ष्य को निर्धारित ना कर पाए या एक नए सपने को ना देख सकें।

– सी. एस. लेवीस

आप एक जिंदगी जीते है, लेकिन उचित तरीके से जिया जाए तो एक पर्याप्त है।

अजीब बहनें

(नेचर में दिनांक 7 मार्च 2013 के खण्ड 495 में छपे लेख 'अजीब बहनें' (Weird Sisters) **- 'महिला वैज्ञानिकों का जीवन चरित्र अविरत रूढीबद्ध धारणाओं के आधिन रहा है, उस पर पैट्रिशिया फाराने जताए हुए अफसोस' का हिंदी रुपांतर)**

रोझलिंड फ्रँकलिन द्वारा लिए गए डीएनए की द्विकुण्डलीकृत संरचना प्रस्तावित करनेवाली क्ष-किरण तस्वीर की एक झलक जेम्स वॉटसन अनुचित तरीके से पाने के लिए बड़ा ही रोमांचित था। लेकिन वह उसके व्यक्तिगत रुपसे कम प्रभावित था। 'द डबल हेलिक्स' में उसने लिखा था कि उसके सीधे काले बालों के साथ अलग लगनेवाली लिपस्टीक कभी ना थी। और एकतीस की उमर में उसके कपड़े ब्ल्यू स्टॉकिंग सोसायटी की किशोरी की कल्पनाएं परिपूर्ण करते थे। अगर वॉटसन को युरोपियन वेशभूषा की शैली के बारे में ज्यादा पता होता तो उसने फ्रँकलिनने जो डिझायनर ख्रिश्चियन डायोर का 1497 का प्रतिष्ठित नया रूप अपनाया था उसे सराहा होता।

अकेले वॉटसन की ही ये धारणा नहीं थी कि किसी इन्सान का एकसाथ एक सामान्य स्त्री और एक प्रथम श्रेणी का वैज्ञानिक होना नामुनकिन है। डॉक्टरेट विद्यार्थिनी जोसलिन बेल जिसने पुच्छल तारोंकी खोज की थी, वह एक विचारशील वैज्ञानिक की छाप बनाए रखने के लिए हर सुबह प्रयोगशाला में जाने से पहले अपनी सगाई की अंगूठी निकाल लिया करती थी। दशकों के बाद जब वे ब्रिटन के रॉचल खगोलिय संस्था की अध्यक्षा थी तब उन्होंने शिकायत करते हुए कहा कि एक महिला के रूप में भौतिकशास्त्र में होते हुए, आपको सर्वशक्तिमान महिला बनना पड़ेगा।

भूतकाल में जीवनी लेखक और उनके प्रकाशकों ने महिला वैज्ञानिकों को हमेशा एक रूढीवाद में जकड़े रखा जैसे कि पूराने ढंग की या फिर जादूगरनी, परावलंबी या फिर सिंहासन के पीछे की शक्ति। ब्रॅन्डा मॅडॉक्स जो की वॉटसन की उग्र राष्ट्रवादी प्रवृत्ति की निंदा करती थी उन्होंने खुद अपनी लिखी हुई फ्रँकलिन की जीवनी के लिए 'द डार्क लेडी ऑफ डीएनए' उपशीर्षक चुनकर लैंगिक दृष्टीवाद को बरकरार रखा है। लेकिन फ्रँकलिन का कौशलपूर्ण संशोधन वॉटसन की ख्याति के लिए आधारभूत था, क्या यह बात काफी दिलचस्प नहीं है?

वर्तमान समय के पुरुष व महिला लेखक अपने आपको पूराने जमाने के दृष्टीकोण से दूर रखना चाहते है। फिर भी अपनी किताब की नुमाईश बढ़ाने के लिए वे अपने विषयों की विशिष्टताओंपर जोर देते है। ऐसा लगता है कि, एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक होने के साथ एक साधारण महिला होना काफी नहीं है। व्यावहारिक जगत में अपना अस्तित्व संभालने के लिए उसे अजीब होना भी जरूरी है। किताब का आवरण पत्र मात्र एक अनदेखी की हुई महिलाको अद्वितीय या फिर यू कहिए की अजीब व्यक्ति के रुप में दिखाकर खरीदनेवाले को फुसला लेता है।

महिला वैज्ञानिकों को प्रकाशन अवसर में परिवर्तित करने से किताबें बिक तो सकती है पर उससे वैज्ञानिक क्षेत्र में समानता दिलाने में मदद नहीं कर सकती। अमरीकी भूवैज्ञानिक और नकशानवीस मेरी थार्प की जीवनी को ही ले लीजिए, जिन्होंने अपने सहकारी ब्रुस हिजन के साथ महासागर के सतह का 1977 में पहला सुनियोजित नक्शा बनाया। 'साऊंडिग्ज'में लेखक हाली फेल्ट ने कल्पना की थी कि, थार्प न्यूयॉर्क के रास्तों पर कोट के बटन खोल, घिसे हुए जूतों और बिखरे बालों के साथ चल रही है। वे

अन्य महिलाओंकी तरह नहीं दिखती - यह लिखते हुए फेल्टने ये व्यापक मान्यता को मजबूत बनाया है कि महिला वैज्ञानिकों का वर्ग ही अलग है।

सहानुभूतिशील लेखकों ने भी इस पूर्वग्रह को बनाए रखा कि, बुध्दि और सुंदरता कभी एक साथ नहीं हो सकती। रिचार्ड होंड्ने सिनेतारका हेडी लेमर को दुनिया की सबसे खुबसुरत औरत बयान करते हुए ये कहकर आश्चर्य की कंपकपी उठाई की उसने कई महत्त्वपूर्ण संशोधन भी किए है। संगीत रचयिता जॉर्ज एन्जेल के साथ मिलकर उन्होंने विस्तृत तरंग रेडिओ की रचना की जिस तकनीक का उपयोग अब तारहीत दूरभाष यंत्र सहित कई सारे उपकरणों में होता है। लेमर ने एक बार कहा था कि, कोई भी लड़की सम्मोहक लग सकती है, बस उसे चुपचाप खड़े रहना है और बेवकूफ लगना है। लेमर की प्रतिभा के बावजूद उसकी सुंदरता और आकर्षक पेशेवर जीवन ने उसके अनुसंधान में दशकों तक बाधाएं लाई। विज्ञान की सबसे प्रसिध्द अभिनेत्री निश्चित रुप से मेरी क्यूरी ही है। दशकों से जीवनी लेखकों ने उसका अवास्तविक और अवांछनीय व्यंगचित्र बनाया है। जिसमें उसको व्यभिचारी, अवसरवादी और विज्ञान के लिए शहीद होनेवाला बताया है। ऐसी ही कुछ रसप्रद कहानियों के अनुसार जब उनके पति को मार दिया गया तब उन्होंने अपने पति के शादीशुदा सहयोगी पॉप लेंग्विन के साथ ताल्लुक बनाके अपनी सफलता को बरकरार रखा हुआ था। इस दौरान इस अग्रणी वैज्ञानिक जिन्होंने अलग बर्ताव करने की हिमंत दिखाई थी। उनकी प्रशंसा करते हुए किसीने लिखा कि वे अपने कामों में कई बार बिना खाए-पिए उलझी रहती थी। उच्च कोटि के अनुसंधान के लिए उन्होंने अपने स्वास्थ्य और दिखावट का भी ध्यान नहीं रखा। क्यूरी के सैध्दांतिक सफलताओं को नीचा दिखाते हुए वे क्यूरी को एक समर्पित मजदूर जैसा दर्शाते है, जिसने कई महीने यथाक्रम पीचब्लेन्ड नामक खनिज को छानने में बिताए, एक बुध्दिहीन और पुनरावृत्तीय काम जिसमें घरेलु कामकाज की निरसता गुंजती है।

आधुनिक जीवनी लेखकों ने इस तरह के आसान प्रतिपादन को जैसे छोड़ दिया है, पर वो तो ऐसे पेश आते है जैसे कि ऐसी महान व्यक्तियों की आलोचना करना अकल्पनीय है। इसलिए शेल्ली एमलिंगने अपनी किताब 'मेरी क्यूरी एन्ड हर डॉटर्स' में भौतिकशास्त्री क्यूरी को इव और आयरिन की अत्याधिक स्नेह करनेवाली एक माता के रुप में प्रस्तुत किया है। जबकि प्रमाण कुछ और ही बयाँ करते है। क्यूरी की बेटी इव ने जिक्र किया है कि प्यार और पश्चाताप के साथ-साथ अतिरिक्त गृहपाठ से लबालब भरे खत भेज कर हर जन्मदिन के बाद क्यूरी ने दूर जाना ही पसंद किया। इव आगे कहती है कि उसके माता-पिता रेडियम को उनकी तीसरी संतान मानते थे और अपनी औलादों को एक प्रयोगात्मक अन्वेषण परियोजना मानते थे। अपनी बेटियों के कपड़े, आहार और शैक्षणिक विकास के बारे में अपनी कॉपी में ध्यानपूर्वक अंकित करती हुई मेरी भौतिक और मानसिक रुप से अपनी बेटियों से दूर ही रही।

गणितज्ञ डोरोथी विंच एक अल्पप्रचलित नाम है जो की अपने पुरुष सहकर्मियों के बीच अपने प्रभावशाली अंदाज की वजह से एक लड़ाकू स्त्री के नाम मशहूर थी। क्यूरी की तरह उनको भी क्रूर महत्त्वाकांक्षा रखनेवाले पुरुष की तरह बर्ताव करने की वजह से अभिवेचित किया गया। रिंच ने जो की ऑक्सफर्ड विद्यापीठ से विज्ञान में डॉक्टरेट पानेवाली पहली महिला थी, उन्होंने प्रोटीन की आण्विय संरचना के सिध्दांत की खोज की, जो की बाद में बदनाम हो गई, आखिरकार आनुवंशिक विज्ञान के लिए यह खोज बहुत महत्त्वपूर्ण रही।

रिंच का नाम मार्जोरी सेनेबल द्वारा लिखित उनकी जीवनी के मुखपृष्ठ पर लिखा गया था, फेल्ट की थार्प पर लिखी गई किताब की तरह नहीं था। लेकिन उपशीर्षक की तहत लिखा गया नाम, नजर को जकड़नेवाले लेकिन गुमराह करनेवाले मुख्य शीर्षक 'आय डाइड फॉर ब्युटी' के सामने अनदेखा ही रह गया। रिंच गणिती हकीकतों की सुरुचिपूर्ण दिखावट से वाकई मोहित हो गई थी और

इसलिए शीर्षक और गुलाबी मुखपृष्ठ के स्वरुप ने निस्संदेह उनकी बौद्धिक प्रतिभा को महत्त्वहीन बनाया।

महिला वैज्ञानिकों की जीवनी का एक और लक्षण है उनके नाम से जुड़े उपनाम का इस्तेमाल करना जैसे कि सेनेकल रिंच के लिए 'डॉट' यह उपनाम चुनती है पर शायद मायकल फॅरेडे के लिए 'माईक' या अल्बर्ट आइनस्टाइन के लिए 'एल' नहीं चुना होता। उसी तरह भले ही मेडॉक्स सरल फिर भी गौरवशाली शैली में लिखती है, वह फ्रँकलिन को रोझलिंड के नाम से आलेखित करती है। फिर वह वॉटसन और उनके पुरुष सहकर्मियों के लिए कुलनाम इस्तेमाल क्यों नहीं करती है? शायद एक सुखद परिचय की धारणा को बरकरार रखने के लिए, पर यह इसी बात की तरफ इशारा है कि जो महिलाएँ विज्ञान क्षेत्र में जाती है वह एक अनजान पुरुषों की दुनिया में कदम रखने जैसा है।

महिला वैज्ञानिकों की प्रतिष्ठा बरकरार रखने के मूल्यांकन में उनके कार्य के महत्त्व के प्रति दिखाई जानेवाली निरसता जितनी जिम्मेदार उनकी किसी के प्रति दिखाई जानेवाली बेमतलब की घनिष्ठता है। जब तक महिलाएं लिंगभेद का आसान तरीका अपनाए बिना उनपर होनेवाली समीक्षा को नहीं अपनाती तब तक सही मायने में समानता नहीं प्राप्त हो सकती। अक्सर कोई भी नए विचार पर्याप्त रुप से अच्छे ना होने के कारण स्वीकृत नहीं होते जैसे कि अमरिकी नौकादल ने लेमर द्वारा विस्तारित मार्गदर्शक प्रणाली को महाकाय होने के कारण स्वीकृति नहीं दी। नोबेल पुरस्कार मिलने में नाकाम होने का मतलब यह नहीं है कि वह महिला कम प्रतिभावान है। डीएनए की आण्विय संरचना खोजने में फ्रँकलिन की क्ष-किरण तस्वीरें अत्यंत महत्त्वपूर्ण थी, पर वॉटसन और क्रिक इस स्पर्धा में आगे बढ़ गए।

रुढ़ीवाद को बनाए रखनेवाली किताबें लोगों की सोच पे असर करती है। जब मैं मेरे प्रारंभिक बीसवी आयु में थी तब मैंने एक संकल्प किया था कि मैं इसको कभी सामने नहीं लाऊँगी कि मेरे पास ऑक्सफर्ड विश्वविद्यालय की भौतिकशास्त्र की स्नातक उपाधि है क्योंकि अनुभव से मुझे यह पता चला था कि मेरा संभाव्य अनुगामी तुरंत ही यह मान लेगा कि मैं एक अजीब किस्म की महिला वैज्ञानिक बनने जा रही हूँ। शिक्षकों से आज भी छात्राओं की गणित और तकनीकी विषयों में राजनैतिक विशुद्धता को पूरा करने के लिए परिचालन किया जाता है, जैसे कि मेरा किया गया था। तद्पश्चात मैंने तुरंत ही स्थानांतर किया, वह इसलिए नहीं कि मैं भौतिकशास्त्र में आनेवाली उलझनों को सुलझा नहीं पाई, ना कि इसलिए की मुझे पुरुषप्रधान वातावरण में डराया गया था, बल्कि इसलिए क्योंकि दोहराए जानेवाले प्रायोगिक कार्य से मैं तंग आ चुकी थी। जीवनी लेखक अपना नजरियाँ बदल सकते है। पर इसलिए उनको अपनी पात्रों को खास वैज्ञानिक के तौर पर दिखाना होगा ना कि अजीब महिलाओं जैसे निरुपण करके सनसनी फैलाना होगा। पुरुषों की तरह महिला वैज्ञानिकों का भी एक विशिष्ट व्यक्तित्व और कुछ विशेष लक्षण होते है। उनमें भी कुछ कमजोरियां और अद्भुत क्षमताएं होती है। इसलिए नहीं कि वो महिलाएं होती है बल्कि इसलिए क्योंकि वह भी इन्सान होती है।

डॉ. शैलजा सिंह एवं **श्रीमती विरश्री जामदार**
जैवसूचना प्रयोगशाला

प्रशंसा या आलोचना में से किसी एक को भी खुद पर हावी मत होने दीजिए, किसी एक में बंध जाना हमारी सबसे बड़ी कमजोरी हो सकती है।

– जॉन वुड़न

कोशिका विज्ञान का एक नया आयाम

सन 2012 का मेडिसीन और फिजिओलोजी का नोबेल पारितोषिक जिनको प्राप्त हुआ है वे सर जोन बी गर्डन और शिन्या यामान्का-इनके संशोधन जितने ही प्रेरणादायी है उनके जीवन। कोशिका विज्ञान और कोशिका पुनर्जनन में एक नए क्षितीज को दिखानेवाले इन वैज्ञानिकों और उनके चकित कर देनेवाले संशोधन कार्य की एक झलक।

सर जॉन गर्डन

सर जॉन गर्डन (2 अक्तूबर, 1933) विकास संबंधी विज्ञान के जीवविज्ञानी है। उनका कोशिका केन्द्रक के प्रतिरोपण और क्लोनिंग के क्षेत्र में बहुत बड़ा योगदान रहा है। उनको 2009 में लास्कर एवार्ड और 2012 में नोबल पारितोषिक से सम्मानित किया गया है। उनको और भी कई सारे पुरस्कार, चंद्रक और मानद पदवी से नवाजा गया है। गर्डन एक सकारात्मक दृष्टिकोण रखनेवाले इन्सान है। उनकी एटोन कॉलेज की पढ़ाई के दौरान जब उन्होंने 250 विद्यार्थियों में से आखिरी दर्जा प्राप्त किया तब उनके शिक्षक ने परिणाम पत्र मे लिखा कि, मैं मानता हूँ कि आप में वैज्ञानिक बनने का सामर्थ्य है, हालाकि फिलहाल आप ही की वजह से ये बहुत हास्यास्पद लग रहा है। गर्डन ने ये पत्र संभलकर रखा था और एक पत्रकार से कहा था कि जैसा कि संशोधन में अक्सर होता है कि आपका परीक्षण काम नहीं कर रहा है तब खुद को ये याद दिलाना अच्छा लगता है कि आप शायद इस काम में इतने अच्छे ना हो और आपके शिक्षक शायद सही थे। उनके यही खुद की नाकामी से ही खुद को प्रेरित करनेवाले अभिगम ने उनको सफलता की इन उँचाईयों तक पहुँचाया है।

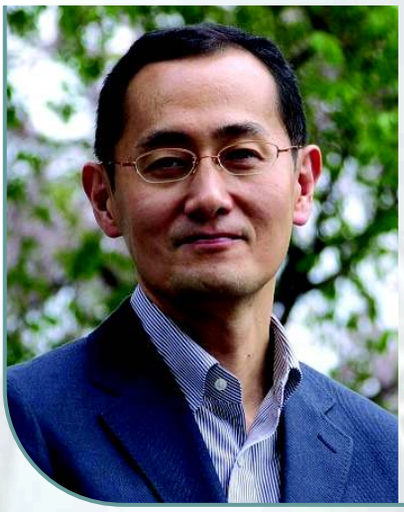

शिन्या यामान्का

शिन्या यामान्का (4 सितम्बर, 1962) एक जापनीज चिकित्सक और वैज्ञानिक है। अभी वे iPS कोशिका संशोधन और विनियोग केन्द्र का संचालन करने के साथ-साथ क्योटो विश्वविद्यालय में प्राध्यापक भी है। उनको वैदक शास्त्र में दिए जानेवाले वुल्फ पारितोषिक (2011), मिलेनिअम तकनीकी पारितोषिक (2012) और नोबल पारितोषिक (2012) जैसे महत्त्वपूर्ण सम्मान प्राप्त हुए है। सन 1987 में ओसाका चिकित्सालय के निवासी शल्य

चिकित्सक होते हुए उनको अपने मित्र शुइची हिराता की सौम्य अर्बुद की शल्यक्रिया करनी थी, जो वे एक घंटे में भी पूरा नहीं कर पाए, हालाकि प्रशिक्षित चिकित्सक को ये काम करने में कुछ 10 मिनट लगते है, तब उनके वरीष्ठ साथियों ने श्लेष करते हुए उनको 'जामान्का' कहा जिसका अर्थ जापानीज़ भाषा में होता है 'अवरोध'। लेकिन ऐसे कई अवरोधों को पार करके उन्होंने अपने दृढ संकल्प से विज्ञान क्षेत्र की अनछुई सिद्धियों को प्राप्त किया। उनके पिताजी भी ये मानते थे कि यामान्का शायद एक अच्छे चिकित्सक नहीं है। यामान्का के विज्ञानी बनने से पहले ही उनके पिता का स्वर्गवास हो गया। यामान्का ने एक भेटवार्ता में कहा कि, स्वर्ग में मेरे पिताजी अब भी यही सोचते होंगे कि मैं एक चिकित्सक हूँ। मैं जल्द से जल्द अपने संशोधन को यथार्थ उपचार में इस्तेमाल करना चाहता हूँ ताकि मैं जब उनसे मिलू तो ये कह सकू।

संशोधन कार्य

परिपक्व कोशिकाओं को फिर से बहुजनक्षम बनाया जा सकता है।

कोशिका विभेदन एकतरफी प्रक्रिया है और अविभेदित कोशिका जो कि बहुजनक्षम होती है। विभेदन के बाद परिपक्व होकर हमारे शरीर में कई तरह की कोशिका जैसे कि मांसपेशी, तंत्रिका कोशिका और त्वचीय कोशिका का निर्माण करती है। बीसवी सदी के पूर्वार्ध में ये माना जाता था कि अविभेदित कोशिका विभेदन के बाद परिपक्व होकर उसी अवस्था में कैद हो जाती है। मतलब उसमें से ना किसी और तरह की और ना तो फिर से अविभेदित कोशिका का निर्माण किया जा सकता है।

सन 1962 में जॉन गर्डन ने इस बात का निरूपण करके इस दृष्टिकोण को जड़मूल से बदल दिया कि मेंढ़क की विभेदित आंत्र उपकला कोशिका के केन्द्रक को अकेन्द्री अंड में आरोपित करके क्रियाशील डिंभकिट का निर्माण किया जा सकता है। गर्डन की खोज विभिन्न प्राणियों में क्लोनिंग के प्रयासों की शुरूआत थी।

हाला कि ये प्रश्न अभी भी जारी था कि क्या विभेदित पूर्ण परिपक्व कोशिका में से बहुजनक्षम कोशिका फिर से बनाई जा सकती है? सन 2006 में शिन्या यामान्का ने बहुत ही सरल लेकिन विस्मयजनक कार्यविधि से साबित किया कि प्रत्यांकनकारकों एक छोटे से समुदाय को विभिदित कोशिका में सम्मिलित करके उस कोशिका को बहुजनक्षम कोशिका की तरह काम करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। परिणामस्वरूप निर्माण हुआ प्रेरित बहुजनक्षम स्टैम सेल यानि iPS (Induced pluripotent Stem Cell) का।

गर्डन और यामान्का ने मिलके हमारी कोशिका विभेदन की सोच को एकदम ही बदल दिया है। उन्होंने बताया कि कोशिका की बहुत ही स्थिर अभेदित अवस्था में से कोशिका को फिर से बहुजनक्षम यानि अस्थिर अवस्था में लौटाया जा सकता है। इस खोज ने कई आधारभूत अनुसंधान के नए दरवाज़े खोल दिए हैं, कई व्याधियों के कारण जानने के संशोधन में नई संभावनाए पेश की है और औषधीय संशोधन को प्रवेगित करके एक नया रूख प्राप्त करने की आशा दिखाई है। ये माना जाता है कि सिर्फ विभिन्न प्रत्यांकनकारकों को कोशिका के भीतर प्रविष्ट कराके वांछनीय कोशिका के निर्माण से हम कई मुश्किल से मिटनेवाली या लाईलाज व्याधि जैसे कि पार्किन्सन्स व्याधि, कर्करोग और कई आनुवांशिक व्याधि के साथ और भी कई सारी बीमारियों के ईलाज की दिशा में एक नई उपलब्धि प्राप्त करेंगे।

मेघल देसाई
वरीष्ठ अनुसंधान अध्येता
प्रयोगशाला क्र-9 (नई बिल्डींग)

जो व्यक्ति अपनी गलतियों के लिए स्वयं से लड़ता है, उसे कोई भी हरा नहीं सकता।

– चाणक्य

सूक्ष्मजीव वन्दना

हे सूक्ष्मजीव तुमको प्रणाम
अति सूक्ष्मरुप में करते हो तुम जग के सबसे कठिन काम
हे सूक्ष्मजीव तुमको प्रणाम, हे सूक्ष्मजीव तुमको प्रणाम
जल थल नभ को विस्तृत कोना,हर जगह तेरा पैदा होना।
अनवरत कार्य करते जाना, थकना न कभी,
न है सोना,अति कठिन शीत, अति कठिन ताप,
अति कठिन दाब का सह लेना।
प्रतिकूल परिस्थिति में रहकर
जग को सुन्दर चीजें देना।
अति बृहत रुप, अति बृहत वेष, अति बृहत कर्म के कर्णधार
अदृश्य रुप में तुम करते इस जग के कण-कण में प्रसार
अस्तित्व धरा का तुमसे है, तुम ही हो इसके सर्वनाम
हे सूक्ष्मजीव तुमको प्रणाम, हे सूक्ष्मजीव तुमको प्रणाम
मल में रहकर भी तोड़ उसे तेरा जग को निर्मल कसा
खारे जल में रहकर के भी इस जग में प्राणवायु भसा
औषधि और हरित ऊर्जा का तुमसे है जिन्दा नया नाम
तुम नष्ट हुए तो नष्ट हुआ मानव का बिखरा हुआ काम
हे सूक्ष्मजीव तुमको प्रणाम, हे सूक्ष्मजीव तुमको प्रणाम
तेरे ही बन्धु बान्धवों ने,
इस जग में हरित-क्रान्ति लाया,
तेरे ही क्रिया-कलापों ने जैवप्रौद्योगिकी को चमकाया
थोड़ी सी भृकुटी तनी अगर,
मच गया धरा पर कोहराम
हे सूक्ष्मजीव तुमको प्रणाम, हे सूक्ष्मजीव तुमको प्रणाम

डॉ. ओमप्रकाश शर्मा
सूक्ष्मजीव संवर्धन संकलन (एमसीसी)

माँ

ईश्वर कुछ गढ़ रहें थें.....

एक अप्सरा वहाँ से गुजरी और उसने ईश्वर से पूछा ,ये आप क्या गढ़ रहें हैं ? मैं आपको लगातार छ दिनों से काम करती देख रही हूँ। ईश्वर ने उत्तर दिया,''मैं माँ को गढ़ रहा हूँ। अप्सरा की जिज्ञासा थी कि,कैसी होती है?

ईश्वर ने उत्तर दिया

जिसकी कोख से, मानवता जन्में .....जिसकी गोद में, सृष्टि समा जाए.....जिसका स्पर्श, बड़ी से बड़ी चोट को सलाहकर ठीक कर दें.....जिसका दुलार, बड़े से बड़े सदमें से उबार दें.....जिसके दो हाथ, सबको दिखें पर हो कई, ताकि जीवन सवाँरने का उसका कर्तव्य बिना बाधा पूरा हो सकें। जिसके मन में भी आँखें हो, जिनसे वो दूर बैठी अपनी संतान को देख सकें.....जो बीमार होने पर भी, दस लोगोंवाले परिवार के लिए हँसकर भोजन बना दे .....नाजुक हो, पर हर मुश्किल को हरा सकने का दम रखें.....जिसके आँचल तले, सृष्टि को सुरक्षा मिले.....जिसके मन में, अपने बच्चों के लिए भाव भरा जल हो और अपने शत्रुओं के लिए ज्वाला.....जिसके दर्शन मात्र से.....मानवता कृत-कृत हो।

मैं उसे गढ़ रहा हूँ, जिसे मानव ठेस तो पहुँचाएगा, पर उसका हाथ ना आशिर्वाद देने से रुकेगा, और ना दिल दुआ माँगने से.....

मैं अपना प्रतिरुप गढ़ रहा हूँ .....

।।ईश्वर प्रतिरुप को नमन।। माँ को नमन।।

श्रुति शर्मा
प्रयोगशाला क्र. 9 (नई बिल्डींग)

वैज्ञानिक

विज्ञान के ज्ञान मे दुनियादारी से जो अज्ञान है,
सच्चे वैज्ञानिक की एकमात्र यही पहचान है
इनके जीवन की गणित में साधारण सा ट्रेंड है,
बक्टेरिया और वायरस इस के प्रिय दो फ्रेंड है
हाइड्रोजन का जुड़ाव या एलेक्ट्रोस्तटिक का अभाव है,
इनका व्यक्तित्वपूर्ण नाभिकीय प्रभाव है
एक क्रिस्टल के लिए ये सब कुछ भुला देते है,
कार्बोहाइड्रेट नहीं तो प्रोटीन से काम बना लेते है
न बोलने पहने कोई सलीका, न खाने का कोई होश है,
इनके रगो मे एंटीबायोटिक्स का डोस है
म्यूज़ियम मे जैसे सजी चलती जीवंत मूरत है,
टेस्टट्यूब और कंप्यूटर्स इनकी बड़ी जरुरत है
विज्ञान ने थोडा दिया और बहुतया छिना है,
होस्टल और लैब के बीच रास्तों में इनका जीना है
जीवन की उत्पतिया आकाशी कोई घटना है,
मानव जाति मे इनका जीवन एक बड़ी दुर्घटना है
चुंबकीय सा आकर्षक या फिर गुरूत्वाकर्षण,
प्रस्तुत है इनके जीवन का है एक छोटासा वर्णन
कवि की कविता या वैज्ञानिक कोई संरचना है,
थोडा सी हकीकत और शेष मेरी एक रचना है

डॉ. पूजा गुप्ता
डीबीटी-पीडीएफ, प्रयोगशाला क्र. 11

उदासी

आज सूरज कितना उदास है
न धूप मे वोह कशिश है, न नीर मे प्यास है
न चिड़ियों की चहकन दरख़्तो की लहक
दूर समुंदरमे उठती कोई तेज लहर-तरंग है
डूबती कश्ती को अपने माझी की तलाश है
आज सूरज कितना उदास है
मर्म हवा की नमी दर्द बयां करती कहती है
की आज उसके चाँद पर पृथ्वी का साया है
नील गगन काले मेघ से व्याकुल उठ आया है
हर किसी को एक नवकिरण की आस है
आज सूरज कितना उदास है

कशमक़श

सोचती रही की आज क्या नया लिख दू
जो मन भाए, क्यों न कुछ नया आजमाए
कलम उठाया तो शब्द कही खो से गए है
लो फिर से हम उन्ही गहराई मे खो गए है
वक़्त बदल गया है पर यादें नहीं है बदली
पंख पसारे उड़ती मेरे दिल की एक तितली
किस फूल के रंगमे रमा हुआ इस का मन
क्या उसको पाने से सुलझेगी यह उलझन
उत्तर मिल जाये? कुछ नया सोचा जाये?

डॉ. पूजा गुप्ता
डीबीटी-पीडीएफ, प्रयोगशाला क्र. 11

नया सफ़र

मेरे जीवन का है यह नया सफ़र नयी है शुरुआत नया शहर
कदमो को आगे बढ़ते हुए पुराने चोलो को उतार फेका मैंने
बीती हर बात की यादों को अपनी मुठ्ठीयों में समेटा है मैंने
नए विकल्पों को तलाशती हुई नयी मंजिल को तराशती मैं
नए पुराने अनुभवों को साथ जोड़ती हुई मन को मोड़ती मैं
भीड़ में अजनबी चहरे है सभी कोई अपना लगे ढूंढ़ना है अभी
जीवन में भरती हूँ नए रंग नयी सुबह साथ लायेगी नए प्रसंग
मेरे जीवन का है यह नया सफ़र नयी है शुरुआत नया शहर

मेरी कलम

कुछ शब्द आज मेरी कलम से बिखर गए
एक नयी रचना मे पिरोया और सवार गए
आयत है कोई या मन की भाव अभिवयक्ति
स्मृतियों के समंदर मे थी कल्पना की शक्ति
नए प्रसंग और समय के बदलते समीकरण
चित्त की संवेदना से उदयत रवि की किरण
सीमाओं के दायरे मे सिमटती हुई हर क्षण
नयी संगतियों के साथ आग्रिम मेरी कलम

आगाज़

जो कारवां छूट गए थे, फिर रास्तो में मिल रहे है
कुछ मंजिलो के धुंधलेसे निशान फिर मिल रहे है
यह अंत है या आगाज़ है किसी नए इम्तहान का
टूटे हुए दरख्तों के टुकडे नए आयाम में जुड़ रहे है
सहमे लडखडाते कदम रुबरु होगे नयी हकीकत से
कुछ हौसला और बुलंद होगा जीवन के नए प्रश्नसे

डॉ. पूजा गुप्ता
डीबीटी-पीडीएफ, प्रयोगशाला क्र. 11

'शरद ऋतु'

काश शरद ऋतु छाएं हर बन, बारहों महीनें बरसें सावन।।

जित देखू उत हरा-भरा बन, झूम उठें मेरा बांवरा मन।।

स्वप्न ये देखूं हर पल मैं, हर ग्राम हो वृंदावन।।

एक घाट पर पानी पिए, शेर-मेमना खेले संग-संग।।

फूलों की बगियाँ मैं देखू,

तितलियाँ बन फूलों पे लोटू।।

सुन्दर सुखद- सुहावन शरद,

मन्त्र-मुग्ध होकर मैं सोचूं।।

मन्त्र-मुग्ध होकर मैं सोचूं.....

श्रुति शर्मा
प्रयोगशाला क्र. 9 (नई बिल्डींग)

द्वंद्व

द्वंद सा है हर तरफ़
सोच से अज्ञात में
सत्य की तलाश में
मैं हूँ सत्य की तलाश में ....

शिखर सी उन्मुक्त, अथाह सी गहरी
बन के विस्मैयाकारी खड़ी
जैसे जीवन की पहेली है,
कर रहा हूँ प्रयत्न बहने का
इस गतिमान से उल्लास में,
क्षितिज़ है चलायमान या अंतहीन ये आसमान
बढ़ रहा हूँ जैसे एक पंछी सा आकाश में,
द्वंद सा है हर तरफ़
सोच से अज्ञात में
सत्य की तलाश में
मैं हूँ सत्य की तलाश में।

जटिल है कहीं तो
कहीं बाधारित प्रवाह में
बहता हुआ सा ये जीवन समय के प्रकाश में,
विविक्त है या है ये मिश्रित
मस्तिष्क अब है स्पंदित मेरा
इस वैचारिक वैष्टिकरण के आभास में,
द्वंद्व सा है हर तरफ़
सोच से अज्ञात में
सत्य की तलाश में
मैं हूँ सत्य की तलाश में।

में भी हूँ चलायमान
पंचतत्त्वों के प्रनौड़ से,
उत्पति से जगत - प्रस्थान तक
हर शान में है जीवन विद्यमान,
निरंतर एक अंत तक, झूझता हूँ स्थूल सा
अचंभित, वियग्र, और कभी
कठिनाइयों में चुभता जीवन शूल सा,
अवसाद को संजो कर, प्रसन्नता के तिरस्कार में
खुद से पूछ रहा हूँ अब,
और आज एक नए सुबह से
जी रहा था क्या में खुद के बहिष्कार में
द्वंद्व सा है हर तरफ़
सोच से अज्ञात में
सत्य की तलाश में
मैं हूँ सत्य की तलाश में।

अमन शर्मा
वरीष्ठ अनुसंधान अध्येता, प्रयोगशाला 3

।। दहेज प्रथा ।।

जब कन्या का जन्म हुआ, तब मात-पिता हर्षाएँ थें।।

पर ना जाने क्यों, दादी माँ के नैना भर-भर आए थे ?

यह देख मुझसे सहा न गया, कुछ कहे बिन रहा न गया ।।

फौरन पहुँची दादी के पास, पूछा दादी तुम क्योंक हो उदास ?

पूछा दादी तुम क्यों हो उदास.....

वो सुन बोली बिटीया मोरी, तू तो है दिल की अति भोली ।।

कैसी उठेगी बेटी की डोली, महंगाई सुरसा सी मुख खोली।।

महंगाई सुरसा सी मुख खोली.....

आज दहेज दानव बन खडा है, दुल्हा लगन बेदी पे अड़ा है ।।

पगडी उतारे पिता खडा है, माँ का कलेजा भी फट पडा है.....

माँ का कलेजा भी फट पडा है.....

कल जब होगी बेटी जवान, ''कैसे होगा उसका फलदान.....? ''

यही चिंता थी मुझको घेरे, बरस पडे फिर नैना मेरे।।

बरस पडे फिर नैना मेरे.....बरस पडे फिर नैना मेरे .....

श्रुति शर्मा
प्रयोगशाला क्र. 9 (नई बिल्डींग)

नारी सशक्तिकरण- एक सार्थक प्रयास

यत्र नार्यस्तु पूज्यते, रमन्ते तत्र देवता।

नारी एक शक्ति है, तथैव शास्त्रों में उसे भगवान शिव की शक्ति भी कहा गया है। दुर्गा देवी शक्ति का अगम्य रूप है। इसलिए प्रभु राम ने लंका पर विजय प्राप्ति की आकाँक्षा हेतु दुर्गा माँ की आराधना की थी। नारी साक्षात धैर्य का प्रतिबिंब व सृष्टि के सृजन का प्रमुख आधार है। विनय एवं करूणा उसकी छवि के प्रसार तत्त्व है। नारी स्वयं एक केसर धवल शीतल हिमनदी के समान है जो सबकी पीड़ाओं को हर लेती है तथा चंदन सा स्पर्श प्रदान करती है। नारी में त्याग करने का अगम्य साहस तथा क्षमाशीलता का बल है। एक तरह से नारी प्रकृति का स्वरूप व ईश्वर का प्रारूप है। माँ के रूप में नारी ही नवजात शिशु की प्रथम शिक्षिका होती है। इसलिए सशक्त नारी को सशक्त समाज व उन्नत देश की नींव कहा जाता है। महिलाओं की भागीदारी के अभाव में सामाजिक प्रगति की अपेक्षा तर्क संगत नहीं है। किसी भी प्रशासनिक व्यवस्था की सफलता का आधारस्तंभ है उस राज्य में महिलाओं की दशा तथा शिक्षा-स्तर।

जब-जब नारी को अवसर प्रदान किया है, तब-तब उसने अपने सामर्थ्य का समूचा प्रदर्शन किया है। पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती. इंदिरा गांधी, पूर्व पुलिस कमिश्नर किरण बेदी तथा अंतरिक्ष यात्री कल्पना चावला आदि इसके साक्षात उदाहरण है। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि वर्तमान युग में महिलाएँ पुरूष के समकक्ष ही नहीं, अपितु अनेक क्षेत्रों में पुरूष के वर्चस्व को भी चुनौती दे रही है। अपनी मेहनत व कर्मठ स्वभाव के बल पर नारी ने आधुनिक समय में अपनी एक अलग पहचान बनाई है।

अब नारी ना तो अबला है और ना ही दयापात्र है। केवल पुरूष की छाया मात्र ही नहीं, परन्तु स्त्री अब सक्षम तथा शिक्षित है। पिछली सदी के उत्तरार्ध तथा नवीन सदी के पूर्वार्ध में विशेषतया स्त्री ने अपने अंदर विद्यमान ऊर्जा को पहचाना है। चूँकि इस प्रयास में परिवार तथा समाज की रूढ़िवादी नीतियाँ उसकी राह के कांटे बनके उभरे हैं। इसी सोच में परिवर्तन की आशा से महिला सशक्तिकरण की अवधारणा संज्ञान में आई है। नारी जागरण के युग परिप्रेक्ष्य में नारी सशक्तिकरण को सार्थकता तो मिली है, फिर भी कई बाधाएँ अभी भी यक्ष बनकर विद्यमान हैं।

आधुनिक प्रगति व विकास के बाद भी अधिकांश महिलाऐं स्वेच्छा या स्वायतत्ता के भ्रम में जीवन यापन करने के लिए मजबूर हैं। जहाँ प्रकृति नें पुरूष को रक्तबीज का वरदान दिया है, वहीं स्त्री को शारीरिक दुर्बलता प्रदान की है। इस स्थिति में यह उल्लेखनीय है कि चाहे किसी उत्पीड़न में पुरूष दोषी भी क्यों न हो, परन्तु नारी को ही चारित्रिक अपवित्रता का कलंक मिलता है। भारत में ही नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व में नारी शोषण तथा पक्षपात बहुत सामान्य तथ्य है। सीता से लेकर द्रौपदी तक को इस समाज में पुरूष सत्तात्मक मानसिकता का शिकार होना पड़ा है। हर युग में नारी को पुरूष वर्चस्व की कीमत देनी पड़ी है। परन्तु, जिस कोख से मानवता का सृजन होता है, क्या वह नारी मात्र प्रदर्शन की वस्तु है?

महिला सशक्तिकरण एक विवेकपूर्ण प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत नारी की प्रगति तथा उन्नति के लिए अनेक प्रयास किए जा रहे है। चूँकि मौलिक रूप से हमारा समाज सदा से पुरूष प्रधान रहा है, अतः महिलाओं को पुरातन काल से ही दोयम दर्जेका स्थान मिला है। हालाकि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही महिला उत्थान के संदर्भ में अनेक प्रयास किए गए है, परन्तु प्रमुख रूप से पिछले कुछ वर्षों में महिला सशक्तिकरण की बयार में एक आमूलचूल परिवर्तन आया है। इन्हीं प्रयासों के फलस्वरुप महिलाओं के आत्मविश्वास में कई गुना वृद्धि हुई है। आज की महिला किसी भी चुनौती को स्वीकार करने के लिए तत्पर है। एक तरफ सरकार की ओर से भी अनेक प्रयोजनाऐं बनाई जा रही हैं वहीं दूसरी ओर अनेक गैर-सरकारी संगठन भी इस दिशा में अत्यधिक प्रयास कर रहे हैं। वर्तमान में महिला केवल घर-गृहस्थी को संभालने तक ही सीमित नहीं रह गई

है, वरन् आज की नारी प्रत्येक क्षेत्र में अपनी उपस्थिति अंकित करा रही है। व्यवसायिक हो अथवा पारिवारिक, हर क्षेत्र तथा हर प्रकार की चुनौती का आज-कल महिलाएँ अत्यधिक सफलतापूर्वक सामना कर रही हैं। कुछ दशक पहले जिन रोजगारों में सिर्फ पुरूष का ही वर्चस्व हुआ करता था, आज शिक्षित व आत्मनिर्भर महिला उन क्षेत्रों में अपनी उन्नति के झंडे गाड़ रही है। शिक्षा के फलस्वरूप नारी की सामाजिक भूमिका में परिवर्तन की रचनात्मक पहल हुई है। ग्रामीण परिवेश में भी महिलाएँ आज खेती के साथ-साथ पंचायत व्यवस्था को भी संभाल रही हैं। पुरूष की सच्ची सहभागी के रूप में आज की नारी उन्नत समाज की नई रूपरेखा के शिलालेख लिख रही है।

सफलता तथा आत्मनिर्भरता का दंभ-रूपी तेज आज हर नारी के चेहरे पर देदीप्यमान है। परन्तु फिर भी नारी सशक्तिकरण से संबंधित अनेक बुनियादी लक्ष्य अभी भी अप्राप्य है। कुरीतियों तथा कुप्रथाओं के मायाजाल में अनेक लक्ष्य उलझ कर रह गए हैं। दहेज प्रथा, बाल-विवाह, कन्या भ्रूण हत्या, निर्धनता तथा निरक्षरता जैसे अनेक कारण नारी के समर्थ बनने की राह को बाधा पहुँचा रहे हैं। वहीं दूसरी ओर नारी पर बलात्कार, घरेलु हिंसा तथा अपहरण जैसी घटनाएँ उसको और भी भय सम्पकृत बनाती हैं। यहाँ पर मैं केवल विवाहित महिला तथा रोजगारी नारी का ही उल्लेख नहीं कर रही हूँ, अपितु वो समस्त नवजात कन्याएँ तथा बच्चियाँ भी शामिल हैं जो दैनिक जीवन में इन सब बातों का कोई ना कोई रूप में शिकार होती आई हैं। जहाँ कन्या को गर्भ में ही समाप्त कर दिया जाता है, वहाँ नारी सशक्तिकरण का लक्ष्य प्राप्त करना बेहद कठिन है।

दुर्भाग्यवश नारी सशक्तिकरण केवल शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित रह गया है। एक तरफ जहाँ महानगरों में रहनेवाली नारी स्वावलंबी तथा आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने के कारण अपने जीवन के प्रमुख निर्णय स्वयं लेने के लिए स्वतंत्र है, वहीं दूसरी ओर ग्रामीण अंचल में आज भी नारी स्वायतत्ता पर प्रश्न चि लगा हुआ है। हम भले ही आधुनिक तथा विकसित होने का दंभ भरे, परन्तु आज भी आधुनिकता केवल हमारे बाहरी आवरण तथा रहन-सहन में आई है। वास्तविक रूप में आज भी हम वैचारिक तथा चारित्रिक रूप में पिछड़े हुए है।

रोजगार, प्रतिस्पर्धा तथा प्रसिद्धि की ललक में हमारी संस्कृति तथा सभ्यता पर जो कुठाराघात हुआ है, उससे अपरोक्ष रूप से नारी सशक्तिकरण के प्रयासों का गहरा झटका लगा है। कुछ संपन्न व धनाढ्य परिवारों की महिलाएँ भी स्वयं के देह-प्रदर्शन पर गर्वित होकर भ्रमित हो जाती है कि उन्होंने नारी सशक्तिकरण को प्राप्त कर लिया है।

यहाँ पुरूष वर्ग की भी मिथ्या सोच है कि, महिला सशक्तिकरण से उनके अधिकारों का हनन होगा। सशक्तिकरण का मतलब अधिकारों का बँटवारा नहीं बल्कि यह तो प्रगति तथा विकास प्राप्ति के लक्ष्यों को सुगम बनाने के लिए एक अभूतपूर्व कदम है। सरल शब्दों में कहा जाए तो महिला सशक्तिकरण तथा नारी अस्तित्व की रक्षा प्राप्ति के लिए हमें अपने विचारों में परिवर्तन लाना होगा। क्योंकि वर्तमान परिस्थिति के लिए केवल पुरूष वर्ग ही नहीं अपितु महिलाएँ भी दोषी हैं। एक बहू आज भी अपने ससुराल में माँ समान सास से प्रताडित होती नजर आती है। अतः हमें अपने वैचारिक परिवर्तन के साथ-साथ स्वयं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए अनेक कदम उठाने होंगे। मानसिक तौर पर भले ही आज की नारी सशक्त हुई हो, परन्तु आत्मसम्मान की रक्षा हेतू हमें शारीरिक स्तर पर भी सशक्त बनना होगा। तभी सही अर्थों में हम महिला सशक्तिकरण का लक्ष्य प्राप्त कर पाऐंगे। समस्त विश्व के विकास तथा उत्थान के लिए नारी-शक्ति का सम्मान और महिला-सशक्तिकरण अत्यंत अनिवार्य है।

अंत में मैं एक बेनाम कवि की कुछ पंक्तियों से अपने विचार प्रकट करना चाहूँगी-

आकाश मेरी बैसाखियों पर टीका है.....
इंद्रधनुष मेरी आँखों का काजल है.....
सूरज की परिक्रमा मेरे गर्भ से गुजरती है.....
बादलों में मेरे विचार उमड़ते है.....
पर अफसोस.....
मेरी अभिव्यक्ति की बयार का आना अभी बाकी है.....
मेरी अभिव्यक्ति की बयार का आना अभी बाकी है.....

(एक आत्मनिर्भर नारी, महिला सशक्तिकरण की आशा के साथ)

निधि चौधरी
प्रयोगशाला क्र.8

मृग तृष्णा (एक लघुकथा)

शहर में अस्पताल था जहाँ सभी प्रकार के रोगी लाए जाते थे। अस्पताल में सभी प्रकार के वार्ड थे। एक वार्ड ऐसा भी था जहाँ भयंकर बीमीरी से पीड़ित रोगी भर्ती थे, जो अपनी जिंदगी की अंतिम साँसे गिन रहे थे।

वह जनरल वार्ड था और बहुत बड़ा था, परन्तु खिड़कियाँ सीमित थी। ऐसे ही खिड़की के निकट एक गंभीर रोगी था जो अपनी जिंदगी से लड़ रहा था और चन्द दिनों का मेहमान था। अन्य सभी मरीज़ भी ऐसे थे जो बिस्तर पर पडे थे और चल फिर नहीं सकते थे। वे खुद से उठ-बैठ नहीं सकते थे।

खिड़की के समीप जो मरीज था, वो बाहर का ब्यौरा देता और अन्य सभी रोगियों का मनोरंजन करता रहता था।

खिड़की के समीप जो रोगी था, उसके पड़ोस में एक ऐसा मरीज़ था जो यही सोचता रहता था कि, कब वह खिड़की वाला मरीज़ मर जाए और उसे वह जगह मिल जाए और बाहर की दुनिया का आंनद ले सके। वह निरंतर भगवान से यही प्रार्थना करता कि वह जल्दी गुज़र जाए। एक दिन वह दिन आता है और खिड़की के समीप वाला रोगी उपरवाले को प्यारा हो जाता है।

पड़ोस का रोगी जल्दी से डॉक्टर से अनुरोध करता है और खिड़की के करीब वाली जगह ले लेता है। उसे बहुत प्रसन्नता होती है। वह वार्डबॉय को कहता है कि उसे उठाकर बैठा दिया जाए, जिससे वह बाहर का आनंद ले सके। जैसेही वह उठकर बैठता है तो वह स्तब्ध रह जाता है। वह बाहर देखता है तो पाता है कि, बाहर दीवार है और उस पार कुछ नहीं दिखाई देता है। वह बहुत ही पछतावा करता है कि, वह निरंतर उस मरीज़ के मरने की कामना करता रहता था। कम से कम वह मनगढ़ंत कहानियों से लोगों का मनोरंजन करता रहता था और उनका उत्साह बढ़ाता रहता था।

तभी उस रोगी को यह मालूम पड़ता है जैसे रेगिस्थान में उठ रही उष्मा को हिस्न पानी समझता है और उसके पीछे भागता हो और पानी की इच्छा से वंचित रह जाता है उसी तरह वह रोगी भी जिंदगी जो कुछ दिनों की बच गयी है, उससे मृगतृष्णा के समान वंचित रह जाता है।

श्री. एस. आय. सिदंगी
तकनीकी अधिकारी ग (मरम्मत)

बाहरी दुनिया में हमारी सुख-शांति की खोज तब तक पूरी नहीं होगी, जब तक ये खुद हमारे अंदर से प्रकट ना हो।

-तेनझिन ग्यात्सो,
14 वें दलाई लामा

दुनिया गोल है- गब्बर की खुली पोल है।

गब्बर सिंह का खौफ़नाक चेहरा किसे याद नहीं। पर उसकी दूसरी तस्वीर को शायद हम में से किसी ने अभी तक देखा नहीं। प्रस्तुत है-गब्बरसिंह की दूसरी कहानी-सुना रही है सोनाली की जुबानी.....

सादा जीवन उच्च विचार- उसका जीने का ढंग बड़ा निराला था। पुराने और मैले कपड़े, बढ़ी हुई दाढी, महीनों जंग खाते दांत और पहाड़ों पर खानाबदोश जीवन। जैसे मध्यकालिन भारत का फकीर हो, जीवन में अपने लक्ष्य की ओर इतना समर्पित कि ऐशो-आराम और विलासिता के लिए एक पल की भी फुरसत नहीं। और विचारों में उत्कृष्टता के क्या कहने जो इ़र गया, सो मर गया जैसे संवादों से उसने जीवन की क्षणभंगुरता पर प्रकाश डाला था।

दयालु प्रवृत्ति- ठाकुर ने उसे अपने हाथों से पकड़ा था। इसलिए उसने ठाकुर के सिर्फ हाथों को सजा दी। अगर वह चाहता तो गर्दन भी काट सकता था। पर उसके ममतापूर्ण और करूणामय ह्रदय ने उसे ऐसा करने से रोक दिया।

नृत्य संगीत का शौकीन- 'महबूबा महबूबा' गीत के समय उसके कलाकार ह्रदय का परिचय मिलता है। अन्य डाकुओं की तरह उसका ह्रदय शुष्क नहीं था। वह जीवन में नृत्य-संगीत एवं कला के महत्त्व को समझता था। बसंती को पकड़ने के बाद उसके मन का नृत्य प्रेमी फिर से जाग उठा था। उसने बसंती के अंदर छुपी नर्तकी को एक पल में पहचान लिया था। गौर तलब यह कि कला के प्रति अपने प्रेम को अभिव्यक्त करने का वह कोई अवसर नहीं छोड़ता था।

अनुशासनप्रिय नायक- जब कालिया और उसके दोस्त अपने प्रोजेक्ट से नाकाम होकर लौटे तो उसने कतई ढिलाई नहीं बरती। अनुशासन के प्रति अपने अगाध समर्पण को दर्शाते हुए उसने उन्हें तुरंत सजा दी।

हास्य रस का प्रेमी- उसमे गजब का सेंस ऑफ ह्युमर था। कालिया और उसके दो दोस्तों को मारने से पहले उसने उन तीनों को खूब हँसाया ताकि वे हँसते-हँसते दुनिया को अलविदा कह सके। वह आधुनिक युग का लाफिंग बुद्धा था।

नारी के प्रति सम्मान- जीवन की कला को अपने हाथों से साकार कर नारी ने सभ्यता और संस्कृति का रूप निखारा है। नारी का अस्तित्व ही सुन्दर जीवन का आधार होता है। बसंती जैसी सुंदर नारी का अपहरण करने के बाद उसने उससे एक नृत्य का निवेदन किया। आज-कल का खलनायक होता तो कुछ और करता।

भिक्षुक जीवन- उसने हिंदु धर्म और महात्मा बुद्ध द्वारा दिखाए गए भिक्षुक जीवन के रास्ते को अपनाया था। रामपुर और अन्य गाँवों से उसे जो भी कच्चा-सुखा अनाज मिल जाता, वह उससे ही अपना गुजर बसर करता था। सोना, चांदी, बिरयानी या चिकन मलई टिक्का की उसने कभी इच्छा जाहिर नहीं की।

सामाजिक कार्य- डकैती के पेशे के अलावा वह छोटे बच्चों को सुलाने का भी काम करता था। सैंकडों माताएं उसका नाम लेती थी, ताकि बच्चे बिना कलह किए सो जाएं।

सोनाली सुधाकर शिंदे
प्रयोगशाला क्र.9 (नई बिल्डींग)

ग्लोबल वार्मिंग- संकट कल का।

ग्लोबल वार्मिंग का अर्थ भूमंडलीय उष्मीकरण है।

भूमंडलीय उष्मीकरण का अर्थ पृथ्वी की निकटस्थ सतह वायू और महासागर की तापमान में 20 वीं सदी से हो रही वृध्दि और उसकी अनुमानित निरंतरता है। भूमंडलीय उष्मीकरण (ग्लोबल वार्मिंग) का संकट 20 वीं सदी के बाद से ज्यादा बढ़ा हुआ नजर आता है।

पर्यावरण का अर्थ पृथ्वी की चारों दिशाओं को छका हुआ। पर्यावरण पशु, पंछी, वनस्पती, सागर, नदियाँ, पर्वत को मिलाकर बना है। 20 वीं सदी के दो हजार साल पहले पृथ्वी के तापमान में वृध्दि नहीं हुई थी। पुरखों के जमाने में ऋषियों के आश्रम हुआ करते थे। शिकार पर पाबंदी थी। पशुपंछियों की गुनगुनाहट सुनाई देती थी। बरसात में मोरों का नाच दिखाई देता था। लेकिन ग्लोबल वार्मिंग के कारण पर्यावरण का हास होते दिखाई दे रहा है। इसके कारण मानवद्वारा पर्यावरण का ऱ्हास।

पर्यावरण का ऱ्हास- 20 वीं सदी के मध्य में जो औद्योगिक क्रांति हुई उसके कारण पृथ्वी के तापमान में औसतन वृध्दि हुई। बढती हुई आबादी के साथ शहर में औद्योगिकीरण बढता गया। ग्लोबल वार्मिंग के कारण ग्रीनहाउस गैसों का निर्माण, जीवाश्म इंधन (Fossil Fuel), का उपयोग इसके कारण तापमान में वृध्दि हुई है। परिणामस्वरूप उसका परिणाम मानव जीवन पर हुआ है। इस समस्या का समाधान हमें ही करना है।

तापमान में वृध्दि निरंतर बढ़ती जा रही है, उसी समय मुझे इस कविता की पंक्तियाँ याद आ रही है-

तापमान नहीं बढ़ा धरती का
बढ़ा है उसका रोष हलका सा।
अपने मतलब के लिए जो किया है तूने
सूत समेत वापस करना है उसको।
अब भी वक्त है जाग जा इन्सान
लौटा दे उसका उसे खोया हुआ सम्मान।

ग्लोबल वार्मिंग (भूमंडलीय उष्मीकरण) के कारण पशुपंछियों, वनस्पति, प्राणि सभी पर संकट आ रहा है। उसका कारण है निरंतर तापमान में हो रही वृध्दि।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण निर्माण समस्या- ग्लोबल वार्मिंग के कारण, ग्रीनहाउस गैसों के निर्माण के कारण कार्बनडायऑक्साईड में वृध्दि, मिथेन, नायट्रोजन ऑक्साईड जैसे गेसों के निर्माण से ओझोन की समस्या हुई है। इस समस्या का समाधान करना है तो हमें जीवाश्म ईंधन (fossil fuel) का प्रयोग कम करना होगा। औद्योगिकीकरण की शुरूवात 20 वीं सदी के मध्य में हुई। 20 वीं सदी के दो हजार पूर्व पृथ्वी के तापमान में वृध्दि नहीं हुई थी। 20 वीं सदी के मध्य में पृथ्वी के तापमान में 0.14 से. वृध्दि हुई थी। 20 वीं सदी के अंत में पृथ्वी के औसतन तापमान में वृध्दि हुई। उसका कारण है जीवाश्म ईंधन का इस्तेमाल। पूरे संसार में जीवाश्म ईंधन का इस्तेमाल बड़े पैमाने पर किया जाता है। उसके कारण वातावरण के ग्रीनहाउस गैसों में वृध्दि, कार्बनडायऑक्साईड के मात्रा में वृध्दि हुई है। तापमान वृध्दि के कारण उसका असर मध्यसागर के तापमान में पड़ता है। उसका असर जीवजंतुओं पर भी पड़ता है। तापमान का असर वनस्पति, प्राणियों पर भी पड़ता है।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण वातावरण में निर्मित कार्बनडायऑक्साईड, मिथेन, नायट्रोजन ऑक्साईड,

ओझोन जैसे घटकों में वृद्धि होने के कारण संसार के तापमान में वृद्धि हुई है। उसीके कारण समस्या निर्माण हो सकती है।

1. तापमान में वृद्धि के कारण उसका परिणाम मनुष्य प्राणी, वनस्पती पर होने के कारण वायरल रोगों का अतिक्रमण हुआ है।
2. तापमान में वृद्धि के कारण विविध प्रजातियों का विलोपन हुआ है।
3. तापमान वृद्धि के कारण नए सागरी मार्गों का संशोधन करना।
4. तापमान के कारण ग्लेशियर का विलोपन हो सकता है।
5. तापमान वृद्धि के कारण नए रोगों का संक्रमण होता है।
6. तापमान वृद्धि के कारण मध्यसागरों में तापमान बढने के कारण उसके पास के शहर पानी में जा सकते है।

समस्या पर उपाय- तापमान वृद्धि को रोकने के लिए पूरे संसार को साथ मिलकर समस्या का हल निकालना चाहिए। हर देश मेरा इसमें कोई योगदान नहीं है ऐसे बताता है। लेकिन उस समस्या से निर्माण हुए प्रलय को सबको भुगतना पड़ेगा। राजनैतिक पार्टियाँ और लोगों को ग्लोबल वार्मिंग के कारण निर्माण हुए समस्या को साथ मिलकर सुलझाना है। अगर तापमान बढ़ा तो उसका भुगतान पूरे संसार को करना पड़ेगा। उसके कारण महासागर के पास के शहरों को खतरा है। पूरा शहर पानी में चला जाएगा। तापमान बढ़ने के कारण अनेक वनस्पती, पशुपंछी प्रजातियाँ विलोपित हो रही है। उनका संवर्धन करना चाहिए। संक्रमित रोगों का प्रमाण बढ़ सकता है।

इस समस्या के समाधान के लिए पूरे संसार को, सारी राजनैतिक पार्टियों को लोगों को साथ मिलकर समस्या के हल के लिए उपाय करने चाहिए। जीवाश्म ईंधन का प्रयोग कम करना चाहिए। नैसर्गिक उर्जा के स्रोत का अवलोकन करना चाहिए। जैसे सौर उर्जा जिसके कारण कार्बनडायऑक्साईड में वृद्धि नहीं होगी। परिणामस्वरूप पृथ्वी का तापमान नहीं बढेगा। ग्रीनहाऊस गैसों का निर्माण नहीं होगा।

ग्लोबल वार्मिंग की समस्या पूरे विश्व की समस्या है, इसलिए साथ मिलकर समस्या का समाधान करना यही पूरे मानवजाति के और विश्व के लिए उपकारक होगा ताकि आनेवाली पीढ़ियाँ सुखी रह सकें।

नितीन सोनावणे
निबंध लेखन प्रतियोगिता - **प्रथम पुरस्कार**

हम अभी पृथ्वी पर ऐसे जी रहे है, जैसे विकल्प के तौर पर रहने के लिए हमारे पास दूसरा ग्रह भी उपलब्ध हो।

-टेरी स्वैरींजन

सकारात्मक सोच की कला

प्रस्तावना- सकारात्मक सोच अर्थात जीवन में समस्त प्रकार के विषय पर निश्छल तथा सकारात्मक दृष्टिकोण जीवन जीने की एक ऐसी अद्भुत कला है जो प्राणिमात्र के संपूर्ण व्यक्तित्व में एक स्फूर्ति का संचार करती है। यह एक ऐसा सर्व कल्याणकारी मंत्र है जिससे व्यक्तित्व में आमूलचूल परिवर्तन होता है। प्रत्येक परिस्थिति को देखने का तथा परिणामों के प्रति आकांक्षा का सकारात्मक दृष्टिकोण रखने पर जीवनरूपी संघर्ष में जीत अवश्यभावी हो जाती है। किसी बुद्धिमान व्यक्ति ने सर्वथा उचित कहा है कि, मन के हारे हार है और मन के जीते जीत है। अर्थात यदि दृष्टिकोण तथा विचारधारा सकारात्मक हो तो कठिन से कठिन परिस्थिति का भी निवारण संभव है। सकारात्मक सोच जीवन में सफलता, संतोष तथा संयम के साथ-साथ आत्मविश्वास भी लाती है। यदि प्राणिमात्र को जीवन सुमधुर, सफल तथा शांतिमय बनाना है तो उसके लिए सकारात्मक सोच ही एकमात्र मंत्र है।

सकारात्मक सोच से जीवन परिवर्तन- सकारात्मक सोच से व्यक्ति तथा समाज की ही नहीं अपितु समस्त विश्व की अनेक विपदाओं का समाधान अत्यंत ही सरलता से किया जा सकता है। सकारात्मक सोच ही सफल तथा समृद्ध जीवन की आराधना का बीज मात्र है।

''जीवन कर्म सहज भीषण है, इसका सब सुख केवल क्षण है, यद्यपि लक्ष्य अदृश्य धुमिल है, किन्तु वीर हृदय हलचल है। अंधकार को चीर अभेद्य बना, चलो वीर साहसी बनो''।

-स्वामी विवेकानंद

उपर्युक्त कथन श्री स्वामी विवेकानंद द्वारा हमारी युवा पीढ़ी को लक्ष्य के प्रति सजग तथा आत्मविश्वासपूर्ण होने का एक आहवाहन है। यदि हम सकारात्मक सोच को धारण करतें हैं तो हमें एक ऐसी शक्ति मिलती है जिससे हम अदृश्य लक्ष्य को भी पाते हैं, अमूर्त को भी महसूस कर पाते हैं। मन तथा विचार एक खेत के समान हैं जिसमें यदि निराशा के बीज बोऐंगे तो असफलता ही हाथ लगेगी तथा आशा के बीज के फलस्वरूप सफलता स्वयं हमारे सामने नतमस्तक हो जाएगी। प्रकृति की सुंदरता को देखने के लिए, भाषा तथा गीतों की ध्वनि सुनने के लिए भौतिक सुखों का भी संपूर्ण आनंद लेने के लिए दृष्टिकोण सकारात्मक होना अवश्य है।

नकारात्मक सोच के दुष्परिणाम- जीवन में नकारात्मक दृष्टिकोण कई प्रकार से हानिप्रद है। असफलता से मिली निराशा के उपरान्त यदि हम नकारात्मक सोच के अंधकार में डूब जाते हैं तो जीवन में आई नवीन आशा की किरण भी हमें दिखाई नहीं देती है। अवसाद का शिकार होने पर व्यक्ति अपने जीवन की समस्त उपलबद्धियों को अनदेखा करके पतन के पथ पर अग्रसर हो जाता है। नकारात्मक दृष्टिकोण स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत हानिकारक है, जिसके फलस्वरूप हमारे ग्रंथितंत्र पर विपरीत प्रभाव होता है व अनेक साध्य तथा असाध्य रोगों से लड़ने की क्षमता कम हो जाती है। एक अमरीकी पत्रिका प्रोसिडिंग ऑफ नैशनल अकादमी ऑफ साइंस के अनुसार निराशा के कारण व्यक्ति की पाचन प्रणाली तथा स्नायु तंत्र पर भयंकर रूप से विपरीत प्रभाव पड़तें हैं जबकि सकारात्मक सोच से व्यक्ति भीषण रोगों से भी सरलता से मुक्त हो जाता है। जिस तरह कटुता से कटुता बढ़ती है तथा स्नेह से मित्रता का जन्म होता है, उसी प्रकार नकारात्मक सोच से जीवन अंधकारमयी हो जाता है एवं सकारात्मक सोच से व्यक्ति के

चारों और एक ऐसा आभामंडल बन जाता है जिससे व्यक्ति स्वयं के अलावा औरों के लिए भी प्रेरणा स्रोत बनता है।

महापुरुषों की सफलता का मूल मंत्र- अनेक सफल महापुरूषों की आत्मकथा को यदि गौर से पठन करें तो हमें यह पता चलेगा कि कितने व्यक्ति सफलतारूपी लक्ष्य को तभी प्राप्त कर पाए जब उन्होंने जीवन में सकारात्मक सोच तथा आत्मविश्वास का साथ नहीं छोड़ा। अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन 52 वर्ष की आयु में जब अमेरिका के सर्वोच्च पद पर आसीन हुए, उससे पहले उन्होंने अनेक कठिनाईयों का दृढ़ संकल्प के साथ सामना किया। भारतवर्ष के भी पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम जी भी अनेक बाधाओं तथा विपदाओं का अभेय होकर सामना करने के बाद भारत के प्रथम नागरिक बनें। विद्युत बल्ब का अविष्कार संपूर्ण विश्व को प्रकाशमय करनेवाले थॉमस एडीसन भी, 10,000 बार असफल होने के बाद सफलता प्राप्त कर पाऐ। परंतु उसके उपरांत एडिसन जी ने कहा कि मैंने 10,000 ऐसे तरीके निकाले हैं जिनसे बल्ब प्रकाशमय नहीं होगा। इतने सरस तथा सरल से कथन के पीछे भी सकारात्मक दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। यदि हमारा दृष्टिकोण सकारात्मक होता है तो हमें प्रत्येक कठिनाई में भी अवसर दिखता है, जबकि एक नकारात्मक सोचवाले व्यक्ति को हर अवसर में भी कठिनाई दिखती है।

सकारात्मक सोच से लाभ- जीवन में समृध्दि, शांति, तृप्ति तथा उन्नति के लिए सकारात्मक सोच अपरिहार्य है। सकारात्मक सोच से व्यक्ति का आत्मविश्वास से संपन्न तथा निराशा तथा अनिष्ट की आशंका से मुक्त होकर अपने लक्ष्य की प्राप्ति सुचारु रुप से कर पाता है। यदि पुष्प देखने की आकांक्षा है तो कांटों के डर से मुक्तिप्राप्ति आवश्यक है। स्वास्थ्य के सर्वांगीण विकास के लिए बाल्यकाल से ही सकारात्मक सोच का होना हितकर है। सकारात्मक तथा आत्मविश्वासयुक्त व्यक्तित्व होने से हम असफलता को भी एक सीढी की तरह उपयोग कर सकतें हैं तथा हमें लक्ष्यप्राप्ति सुलभ हो जाती है। किसी उर्दु शायर ने ठीक ही कहा है-

किसने कहा है कि आकाश में छेद नहीं होता,

एक पत्थर तो तबीयत से फेकों यारों।

अर्थात यदि इच्छाशक्ति दृढ़ तथा सकारात्मक हो तथा असफलता का भय ना हो तो असंभव को भी सरलता से संभव किया जा सकता है।

उपसंहार- सकारात्मक सोच ही व्यक्ति का मूलधर्म है तथा सबसे मूल्यवान निधि है। सकारात्मक दृष्टकोण से ही एक सामान्य जीवन जीनेवाला व्यक्ति भविष्य में सफलता के परचम लहराकर अपने जीवन के साथ-साथ उससे संबंधित समस्त प्राणियों के जीवन में खुशहाली तथा शांति का संचार करता है। मनुष्य का जीवन उसकी सोच से प्रत्यक्ष रुप से प्रभावित व संचालित होता है। जीवन रुपी सागर में आत्मविश्वास तथा सकारात्मक सोच रुपी पतवार के होने से मार्ग सुगम तथा सरल हो जाता है।

अतः अंततः यदि प्राणिमात्र को शांति तथा सौहार्द के साथ जीवन जीना है तो सकारात्मक सोच की कला में पारंगत होना आवश्यक है, जिससे एक स्वस्थ तथा प्रगतिमय समाज का निर्माण हो सके। ऐसे समाज के सभी नागरिकों में परस्पर प्रेम तथा सहयोग की भावना होगी तथा बड़ी से बड़ी विपदा का जोश तथा आत्मविश्वास से समाधान होगा।

निधि चौधरी
प्रयोगशाला 7
निबंधलेखन प्रतियोगिता- **द्वितीय पुरस्कार**

सकारात्मक विचारक अदृश्य चीजों को देख सकता है, अमूर्त चीजों को छू सकता है और अकल्पनीय सिद्धियों को प्राप्त कर सकता है।

-विन्स्टन चर्चिल

ग्लोबल वार्मिंग - संकट कल का

नि:संदेह हम 21वीं सदी में काफी तरक्की कर चुके हैं, किंतु इस प्रगति पथ पर अग्रसर क्या हमने कभी इस बात पर गौर फरमाया है कि जाने-अनजाने में हम अपने पर्यावरण को कितना दूषित कर चुके हे, और उसे कितना नुकसान पहुँचा चुके है? यही कारण है कि आज यह पर्यावरण चीख-चीख कर भिन्न भिन्न प्रकार से हमारा ध्यान आकर्षित कर रहा है। कभी सुनामी के रुप में तो कभी सुखा या अकाल के रुप में। एक बार जो हम इस प्रगति पथ पर चल पड़े है कभी पलट कर देखने की कोशिश ही नहीं की इस सुंदर स्वच्छ धरा को हमने कितना कुरूप बना दिया है।

पर्यावरण इस शब्द का अर्थ है- परि अर्थात चारों ओर और आवरण का अर्थात घिरा हुआ। वास्तव में हमारे चारों ओर की स्थितियाँ, परस्थितियाँ जैसे-जल, स्थल, वायु, वृक्ष, पशु, पक्षी, पहाड़ आदी हमारा पर्यावरण है। और मनुष्य की सभी गतिविधियों का असर हमारे पर्यावरण पर होता है। आज जनजीवन के लिए अतिआवश्यक ऐसे जल और वायु को हम बहुत दूषित कर चुके है। और हमारी इन्हीं गतिविधियों का नतीजा है ग्लोबल वार्मिंग।

यह धरती वायुमंडल से घीरी हुई है। इस वायुमंडल में कई प्रकार की गैसेस है जैसे नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, कार्बनडायऑक्साईड, ओझोन आदी। इनमें से कुछ गैसेस जैसे कार्बनडायऑक्साईड, मिथेन, नाइट्रस ऑक्साईड, वॉटर वेपर यह सब ग्रीन हाऊस गैसेस कहलाई जातीं हैं। जब सूर्य की किरणें धरती पर पड़ती है, तो और कुछ किरणों का हिस्सा वापस रिफ्लेक्ट हो जाता है, और कुछ किरणों के हिस्से का समावेश इन ग्रीन हाऊस गैसेस में हो जाता है। इससे धरती के तापमान में गरमाहट आ जाती है जो कुछ हद तक जनजीवन के लिए आवश्यक भी है। इसे ग्रीन हाऊस इफेक्ट भी कहतें हैं। किन्तु अगर यह ग्रीन हाऊस इफेक्ट आवश्यकता से अधिक बढ़ जाए तो इसके परिणाम बहुत ही भयंकर हो सकते है। और इसी का सबसे बड़ा उदाहरण आज हमारे समक्ष ग्लोबल वार्मिंग के रुप में है।

ग्लोबल वार्मिंग का अर्थ है पूरे विश्व के औसत तापमान में बढौतरी । और इसका जिम्मेदार और कोई नहीं बल्कि हम मनुष्य ही है। जैसे जैसे मनुष्य की प्रगति हुई, फैक्ट्रियाँ, कल-कारखानें बढ़ते गए। वाहनों की मात्रा में वृद्धि हुई। जनसंख्या बढ़ी। बड़े-बड़े जंगलों का सर्वनाश किया गया। और इस सबका सीधा असर हमारे पर्यावरण पर पड़ा। कल-कारखानों से उत्सर्जित धुआं जिसमें कई नशीली गैसेस होती है। वाहनों से निकलनेवाले धुएँ की वजह से जिसमें बड़ी मात्रा में कार्बनडायऑक्साईड और कार्बन मोनोऑक्साईड होता है, वातावरण में ग्रीन हाऊस गैसेस की मात्रा में वृद्धि हुई। वृक्षों की कटाई की वजह से भी ग्रीन हाऊस गैसेस की मात्रा में वृद्धि हुई क्योंकि सभी वृक्ष अपना भोजन बनाने के लिए CO_2 का प्रयोग करते है। इस वजह से अगर पेड़ों की संख्या ज्यादा हो तो CO_2 की बढ़ती मात्रा के दूषित प्रभाव से बचा जा सकता है। इन सबका प्रभाव आज हम ग्लोबल वार्मिंग के रुप में झेल रहे है। पिछले दशक में धरती के औसत तापमान में 0.3-0.8 डिग्री सेल्सीअस से वृद्धि हुई है। बढ़ते तापमान की वजह से बर्फ की परत भी पीघल रही है, जिससे समुद्र के पानी की मात्रा भी बढ़ती जा रही है। हाल ही में कई वैज्ञानिकों के

अनुसार यदी धरती के औसत तापमान में इसी प्रकार बढौतरी होती रही तो इसका असर सिर्फ मनुष्य जाती पर ही नहीं बल्कि धरती के पूरे जनजीवन पर होगा। बढ़ती गर्मी की वजह से एअर-कंडीश्नर और रेफ्रीजरेटर का उपयोग बढेगा, इससे वातावरण में क्लोरोफ्लोरो कार्बन्स की मात्रा बढ़ेगी, जो की एक ग्रीन हाऊस गैस है। बढ़ती जनसंख्या की जरूरतों की पूरा करने के लिए कई जंगल नष्ट होंगे जिससे वातावरण का संतुलन बिगड़ेगा, और गर्मी बढ़ेगी। अगर सब कुछ ऐसे ही चलता रहा तो सिर्फ मनुष्य गण ही नहीं बल्कि इस धरती से सबका नामोनिशान मिट जाएगा। इन सभी गतिविधियों पर कहीं न कहीं तो अंकुश लगाना ही होगा।

अगर नियमित रुप से कुछ चीजों का पालन किया जाए तो यह कार्य इतना भी जटील नहीं है। 2009-2010 में कोपनहैगन में विश्व स्तर पर ग्लोबल वार्मिंग को लेकर चर्चा हुई थी। यहाँ विश्व के सभी बड़े-बड़े वैज्ञानिकों ने इस समस्या पर अपनी चिंता व्यक्त करते हुए कई सुझाव दिए। हम सभी सुझावों का पालन तो नहीं कर सकते, किंतु यदि इनमें से कुछ सुझावों पर गौर फरमाया जाए तो हम इस बढ़ती ग्लोबल वार्मिंग की समस्या पर कुछ हद तक नियंत्रण पा सकते हैं।

1. यदि हम वृक्षारोपण करें और पेड़-पौधों को लगाए और उन्हें नियमित रुप से सिंचन का प्रयास करें तो काफी हद तक वातावरण से दूषित हवा का प्रभाव कम करने में मदद कर सकते है। हम अपने घरों में छोटे- छोटे पौधे लगा सकते है। अपने शहरों में जगह जगह बाग-बगीचे या वृक्ष लगा कर सहायता कर सकते है।

2. यदि हमारी सरकार बसों और लोकल ट्रेनों जैसी सुविधाएँ बढ़ा, तो रोज की दिनचर्या के लिए पब्लिक ट्रांसपोर्ट का उपयोग कर बड़ी संख्या में धुए को कंट्रोल कर सकतें है।

3. एअर कंडीश्नर की जगह अगर कूलर का उपयोग बढ़ाया जाए तो भी सीएफसीएस की मात्रा पे अंकुश लगाया जा सकता है।

यह सब छोटी-छोटी बातों का ध्यान अगर दिया जाए तो इस समस्या पर काबू पाया जा सकता है।

पायल रानडे
प्रयोगशाला 10
निबंधलेखन प्रतियोगिता- **तृतीय पुरस्कार**

कितना अच्छा हो अगर हम पृथ्वी को बेहतर बनाने के प्रयास में इसी पल जुट जाए।

-एन फ्रेंक

बाल शिक्षा का अधिकार

मानव जीवन में शिक्षा का महत्त्व

यहाँ मैं बाल शिक्षा के अधिकार पर लिखने से पहले सर्वप्रथम मानव जीवन में शिक्षा के महत्त्व पर संक्षिप्त प्रकाश ड़ालना चाहूँगा। मानव जीवन में शिक्षा का स्थान सर्वोच्च है, जैसा कि निम्न श्लोक से स्पष्ट होता है-

विद्या ददाति विनयम,
विनयादि पाति पात्रताम।
पात्रताम धनमप्राप्नोति,
धनादि धर्मम ततः सुखम।

अर्थात विद्या विनय को देती है। विनयशीलता पात्रता प्रदान करती है। पात्रता से धनोपार्जन होता है। धन से धर्म और धर्म से सुख की प्राप्ति होती है। अतः यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि सारे सुख का मूल शिक्षा ही है।

संस्कृत के दूसरे श्लोक में शिक्षा के महत्त्व को इस प्रकार दर्शाया जा चुका है।

विद्यव्वम च नृपव्वम च नैव तुल्यम कदाचन।
स्वदेशे पूज्यते राजा, विद्वानम सर्वत्र पूज्यते।

अर्थात विद्वान और राजा की कभी तुलना की ही नहीं जा सकती क्योंकि राजा की पूजा तो केवल उसके देश में होती है जबकि विद्वान सर्वत्र पूजे जाते है।

अतः शिक्षा किसी भी समाज का आईना है, और किसी देश अथवा राष्ट्रकी भौतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक और सामाजिक विकास उस देश की शिक्षा के स्तर से जाना जा सकता है। अतः यहाँ यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि शिक्षा मानवजीवन का मूलाधार है तथा किसी राष्ट्र के सशक्त विकास की आधारशिला है।

बाल शिक्षा का अधिकार

शिक्षा मानव जीवन का जन्मसिद्ध अधिकार है। बालक और बालिकाओं को शिक्षा से वंचित रखना घोर अपराध की श्रेणी में आता है। किसी देश का बालसमूह उस देश की अपूर्व धरोहर है। क्योंकि आज का बाल समुदाय कल का सशक्त प्रौढ़ और सभ्य नागरिक है। किसी देश के विकास की कल्पना अधूरी ही नहीं बल्कि झूठी है अगर वह देश अपने बालशिक्षा के प्रति सचेष्ट नहीं है। यहाँ मैं यह कहना चाहूँगा कि, शिक्षण और पोषण एक दूसरे के पूरक है। अच्छा स्वास्थ्य ही अच्छे शिक्षण को बढ़ावा देता है। भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है कि, बिना अच्छे स्वास्थ्य के गीता समझना मुश्किल है। अतः अच्छे शिक्षण के लिए हमें अच्छे पोषण पर भी उतना ही ध्यान देना होगा।

भारत में बालशिक्षा की दशा और हमारा दायित्व

बड़े अफसोस के साथ लिखना पड़ रहा है कि, आजादी के 67 साल के बाद भी भारत में बालशिक्षा की दशा सोचनीय है, और हम अपने लक्ष्य को पाने में अक्षम रहे हैं। हम अब भी गरीबी, अशिक्षा, अतिशय जनसंख्या वृद्धि और रुढिवादिता जैसे मुद्दों से जुड़े हुए है। यह बात शत-प्रतिशत सत्य है कि जिसका पेट भरा है उसे दूर की सूझती है। बालशिक्षा के परिपेक्ष में भी यह काफी हद तक सही है। भुखमरी और गरीबी से पीड़ित परिवार को पहले दो समय की रोटी की चिन्ता होती है। शिक्षा उसके लिए गौण विषय है। पेट भरने की चिन्ता में देश का नौनिहाल पुस्तकों का बोझ उठाने के बजाए छोटी उम्र में काम का बोझ उठाता है और उसके नन्हें हाथ किताबों से खेलने के बजाए खेत में काम करते है या किसी का बर्तन साफ करते और रोड़ का कचरा बिनते है।

उपलब्ध बच्चों के अनुसार भारत की 10 प्रतिशत बच्चों की जनसंख्या अब भी शिक्षा से वंचित है। उच्चशिक्षा की वो बात ही छोड़ दे हम आज उन्हें प्राथमिक शिक्षा देने से भी असक्षम है।

जैसा मैंने पहले वर्णित किया कि शिक्षा ही राष्ट्र की आधारशीला है, बिना उचित शिक्षा के किसी देश की भौतिक, नैतिक, वैज्ञानिक और आर्थिक विकास की कल्पना ही नहीं की जा सकती। जातिवाद, क्षेत्रवाद, सम्प्रदायवाद और विकृत राजनीतिकरण की समस्या कहीं ना कहीं जाके शिक्षा से जुड़ी हुई है। इनका उचित समाधान शिक्षा के माध्यम से ही हो सकता है।

इस देश के नागरिक होने के कारण हमारा यह दायित्व बनता है कि हम सब संगठित होकर और आपसी मतभेद भुलाकर बालशिक्षा के प्रोत्साहन के लिए अपने स्तर से प्रयास करें। यद्यपि कुछ स्वयंसेवी संगठन इस दिशा में पहले से ही प्रयास कर रहे है और अच्छा कर रहे है। फिर समाज में इसके प्रति सरकारी और गैरसरकारी स्तर पर नए सिरे से प्रयास करने की जरूरत है। शायद डॉ. कलाम और पंडित जवाहरलाल नेहरु का राष्ट्रप्रेम उनके बालप्रेम से परिलक्षित होता है। वो इस तथ्य को भली भाँति जानते थे कि बिना बालशिक्षा को प्रेरित किए और उसे सही दिशा देने से राष्ट्र का विकास अधूरा ही नहीं बल्कि असंभव है।

निष्कर्ष

शिक्षा मानव जीवन का अभिन्न अंग एवम् उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। किसी देश के समुचित विकास की कुंजी उसके सुशिक्षित, सुसंगठित और ऊर्जावान बालसमुदाय पर निर्भर हो हमे देशहित में अपने सारे मतभेदों को भुलाकर देश की बालशिक्षा के विकास एवं सुधार के लिए समन्वित प्रयास करना चाहिए। क्योंकि शिक्षा ही देश की सारी समस्याओं का एकमात्र समाधान है। और अन्त में मैं यह निवेदन करना चाहूँगा कि कुत्ता पालने की जगह दीन हीन असहाय बच्चा पालना ज्यादा उत्कृष्ट है और ज्यादा सुख देता है।

महाकवि निराला के अनुसार-

कुत्तों को मिलता दूध भात
भूखे बच्चे चिल्लाते है।
माँ की छाती से चिपट-चिपट
जाड़े की रात बिताते है।

अतः उत्कृष्ट भारत का सपना तभी साकार हो सकेगा जब हम सब मिलकर अपने देश के बालशिक्षण और बालपोषण के लिए जागरूक होंगे।

डॉ. ओम प्रकाश शर्मा
सूक्ष्मजीव संवर्धन संकलन
हिंदी निबंध प्रतियोगिता- **समाश्वासक पुरस्कार**

शिक्षा वह शक्तिशाली हथियार है, जिसको आप दुनिया बदलने में इस्तेमाल कर सकते है।

–नेल्सन मंडेला

पुस्तकालय एवं समाज

पुस्तकालय ज्ञानार्जन का सर्वोच्च स्थान है। समाज के सर्वोन्मुखी विकास में पुस्तकालयों का महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं। पुस्तकालय ही एक ऐसा स्थान है जहाँ पुस्तकें व्यवस्थित रुप में पाठको के उपयोग के लिये रखी जाती हैं। इसके अतिरिक्त पुस्तकालय दुर्लभ किताबें और पांडुलिपियाँ एवं सांस्कृतिक धरोहर को ना केवल संग्रहित और संरक्षित रखता है बल्कि इसे पीढ़ी दर पीढ़ी उपलब्ध कराने में सहायक है। प्राचीनकाल से ही पुस्तको को ज्ञान का स्रोत माना जाता है और पुस्तकें आदर्श गुरू होती है। पुस्तको में ही विश्व के महानतम विचार संकलित हैं, इसलिए पुस्तकों को विश्व की महानतम कृति माना गया है। पुस्तकालय समाज में शिक्षा के प्रसार एवं सूचना संचार का एक प्रभावशाली माध्यम है।

प्रांरभिक काल में पुस्तकों को व्यक्तिगत संपत्ति माना जाता था। राजा महाराजा, धनी व्यक्ति अपने व्यक्तिगत उपयोग के लिये पुस्तकों एवं ग्रंथों को बांध कर अलमारियों में बंद रखते थे ताकि कोई दूसरा इसका उपयोग न कर सकें। इस वजह से जन साधारण इसके लाभ से वंचित रहता था। चूंकि प्राचीन पुस्तके दुर्लभ एवं हस्तलिखित होती थीं और उनकी प्रतिलिपियाँ बनाना कठिन और खर्चीला था इसलिये इनको सुरक्षित रखना आवश्यक था।

मुद्रण-प्रणाली के विकास के साथ ही पुस्तकों के स्वरुप में परिवर्तन हुआ और पुस्तकों को मनचाही संख्या में छापा जाने लगा। मुद्रण-प्रणाली ने पुस्तकालय के विकास में एक महत्वपूर्ण योगदान दिया। कई लोगों ने अपने धर्म प्रचार, प्रसार एवं विकास के लिये और समाज का ध्यान आकर्षित करने के लिये पुस्तकालयों की स्थापना की। बौद्ध धर्म ने पुस्तक दान को महान दान बताया है। इसके साथ ही लोगों ने पुस्तक दान को प्रोत्साहित किया और पुस्तकालय में पुस्तक दान कर पुस्तकालय को समृद्ध किया।

सभ्यता के विकास के साथ साथ लोगों ने समाज के विकास में बदलाव जरूरी समझा। परंतु एक शिक्षित एवं सूचना संपन्न व्यक्ति ही समाज में बदलाव ला सकता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये एक ऐसी संस्था (पुस्तकालय) की स्थापना की जहाँ पर ज्ञान को संग्रहित एवं सुरक्षित रखा जा सके और उसका उपयोग समाज के सभी धर्म, समूदाय, वर्ग, उम्रके लोग कर सके। मनुष्य की इसी प्रवृत्ति ने पुस्तकालय की स्थापना को बल दिया।

आवश्यकता आविष्कार की जननी है। समाज में परिवर्तन और जागरूकता लाने के लिये पुस्तकालय की सेवा में परिवर्तन किया गया और सार्वजनिक पुस्तकालय और पुस्तकालय विस्तार सेवा की स्थापना हुई। सार्वजनिक पुस्तकालय के अंतर्गत जो लोग स्कूल या कॉलेज में नहीं पढते, निजी व्यवसाय करते है, पुस्तकें नहीं खरीद सकते एवं जो पढ़ने में रूचि रखते है ऐसे वर्गोकी को ध्यान में रख कर जन साधारण की पुस्तकों की माँग सार्वजनिक पुस्तकालय पूरी करता है। वास्तव में सार्वजनिक पुस्तकालय जनता के विश्वविद्यालय होते है। विस्तार सेवा के अंतर्गत ज्ञान के प्रसार और प्रचार पर बल दिया जिसमे पुस्तकालय सेवा को एक स्थान तक सीमित ना रख कर पुस्तकों को गाँव गाँव में घर बैठे जनसाधारण को पुस्तकालय सेवा प्रदान की जाने लगी।

आधुनिक युग में सूचना तकनिकी, दूरसंचार एवं इंटरनेट सुविधा के माध्यम से पुस्तकालय सेवा में क्रांतिकारी परिर्वतन आए जिसके द्वारा देश के किसी भी क्षेत्र में बैठे किसी भी पाठक को बिना समय नष्ट किए उसकी आवश्यकतानुसार पाठ्य सामग्री उपलब्ध हो जाती है। ये तकनीक समय और स्थान की बाधाओं को दूर करने में सहायक है। इससे पुस्तकालय की कार्य प्रणाली में बहुत परिवर्तन हुआ है जिसके द्वारा सूचना का संग्रह, खोज, संप्रेक्षण एवं मूल्यांकन सरल हो गया।

पुस्तकालय समाज में व्यक्ति को शिक्षित करता है, उनको सूचना उपलब्ध कराता है एवं उनको एक अच्छा नागरिक बनाता है। किसी भी देश का भविष्य इस बात पर निर्भर होता है कि उसकी आबादी कितनी शिक्षित है। यह कहना उचित होगा कि समाज और देश में उच्च स्थान रखने वाले व्यक्ति सूचना संपन्न एवं उत्तम पाठक होते है। देश के अधिकांश महान समाज शास्त्री, वैज्ञानिक, दर्शनशास्त्री आदि पुस्तकालय के प्रशंसक होते है। व्यक्ति की सभ्यता, संस्कृति, शिक्षा एवं बहुमुखी विकास में पुस्तकालय की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। किसी संस्था को सामाजिक तभी माना जाता है जब उसकी उत्पत्ति और विकास समाज के साथ जुड़ा हो इसलिये पुस्तकालय को सामाजिक संस्था माना जाता है।

रामेश्वर नेमा
तकनिकी अधिकारी (ख)
पुस्तकालय एवं प्रलेखन अनुभाग

संस्था में राजभाषा कार्यान्वयन

सूचनात्मक लेख

14 सितम्बर, 1949 को भारतीय संविधान परिषद द्वारा हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकृत किया गया। तत्पश्चात सभी सरकारी कार्यालयों में हिन्दी को कार्यालयीन कामकाज की भाषा के रूप में अपनाया गया।

हिन्दी कामकाज को बढावा देने के लिए, राजभाषा कार्यान्वयन सुचारू रूप से करने के लिए, राजभाषा कार्यान्वयन पर मार्गदर्शन और सहयोग प्रदान करने के लिए, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निर्देशानुसार हमारी संस्था में भी राजभाषा कार्यान्वयन समिति की स्थापना की गई है। इस समिति में विभिन्न अनुभागों का प्रतिनिधित्व करने वाले अधिकारी सदस्यों के रूप में कार्यरत है। हर तिमाही में इस समिति की बैठक का आयोजन किया जाता है। इस बैठक में हिन्दी कामकाज को बढ़ावा देने के साथ-साथ, हिन्दी के प्रति सजग रहकर समिति के सभी सदस्य हिन्दी कार्यान्वयन के लिए अपना मार्गदर्शन एवं सुझाव प्रदान करतें हैं।

संस्था में प्रायः उपयोग में लाए जाने वाले सभी प्रकार के प्रपत्रों/फार्म्स और अधिकतम प्रारूपों का द्विभाषीकरण किया गया है। तद्नुसार विविध अनुभागों से कार्यालय ज्ञापन, परिपत्र, अंतर्गत टिप्पणी, सूचना आदि दस्तावेज द्विभाषी रूप से जारी किए जाते है। अन्य कार्यालयों, संस्थाओं के साथ किया जानेवाला अधिकतम पत्राचार द्विभाषी रूप में किया जाता है। संस्था में कार्यरत सभी अधिकारियों/ कर्मचारियों को अपना काम हिन्दी में करने के लिए समय-समय पर कार्यालय ज्ञापन एवं टिप्पणियों द्वारा सूचित किया जाता है। सभी कम्प्यूटरों पर युनिकोड समर्थित फोंटस स्थापित किए गए है, इसके कारण संस्था के किसी भी कम्प्यूटर पर हिन्दी टंकण किया जा सकता है।

हिंदी शिक्षण योजना, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के द्वारा आयोजित कम्प्यूटर पर हिन्दी टंकण एवं हिन्दी आशुलिपि प्रशिक्षण के लिए संस्था से कर्मचारियों को नामित किया जा रहा है। गौरव की बात है कि, जुलाई, 2012 में आयोजित हिन्दी आशुलिपि प्रशिक्षण में श्रीमती. सॅण्ड्रा फर्नांडिस ने शत प्रतिशत अंक हासिल करके अखिल भारतीय स्तर पर प्रथम क्रमांक प्राप्त किया है। राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा उन्हें विशेष प्रमाणपत्र के साथ सम्मानित किया गया।

प्रतिवर्ष दिनांक 14 से 21 सितम्बर के दौरान हिन्दी सप्ताह समारोह का आयोजन किया जाता है। इसके अंतर्गत हिन्दी निबंध, श्रुतलेखन, टिप्पणी लेखन जैसी विविध प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है और स्थानीय हिंदी विशेषज्ञ को हिंदी दिवस समारोह के लिए प्रमुख अतिथि के रूप में आमंत्रित करके उनके व्याख्यान का आयोजन किया जाता है। हिन्दी सप्ताह के दौरान आयोजित सफल प्रतियोगिओं को पुरस्कार एवं प्रमाणपत्र दिए जाते हैं।

पिछले वर्ष हिंदी दिवस समारोह के अवसर पर संस्था की हिन्दी वेबसाईट का प्रमोचन किया गया। अंग्रेजी वेबसाईट के साथ ही समय-समय पर हिन्दी वेबसाईट का अद्यतन किया जाता है। हर एक कंप्यूटर पर युनिकोड समर्थित फोंट लगाने की वजह से 'वेबमेल' या 'स्क्विरलमेल' के जरीए अधिकतम उपयोगकर्ता हिंदी में ईमेल्स भेज सकतें हैं।

दिनांक 6 नवम्बर, 2012 को माननीय संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति द्वारा संस्था में चल रहे हिन्दी कार्यान्वयन का निरीक्षण किया गया।

छोटे-छोटे परिपत्र, टिप्पणियाँ, ज्ञापन, संमतिपत्र आदि के अनुवाद के साथ-साथ, प्रतिवर्ष संस्था का वार्षिक रिपोर्ट हिन्दी में अनुवादित किया जाता है। हिन्दी कामकाज को बढ़ावा देने हेतु, इस वर्ष से 'मीमांसा'- हिंदी पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है, जिसमें संस्था के वैज्ञानिक, अधिकारी, कर्मचारी एवं विद्यार्थियों द्वारा लिखित स्वरचित रचनाओं को शामिल किया जा रहा है। आशा है कि, संस्था में चल रहें हिन्दी कार्यान्वयन के लिए आप सभी से संपूर्ण सहयोग प्राप्त होगा।

'हिन्दी में काम करना आसान है, शुरूआत तो कीजिए!'

स्मिता किशोर खडकीकर
कनिष्ठ हिन्दी अनुवादक

राष्ट्रीय कोशिका विज्ञान केन्द्र, पुणे

राजभाषा कार्यान्वयन समिति

डॉ. शेखर चिं. मांडे	-	अध्यक्ष
श्री. वी. एस. शिंदे	-	आयोजक सदस्य
प्रभारी पुस्तकालय अनुभाग	-	सदस्य
प्रभारी संगणक अनुभाग	-	सदस्य
डॉ. गिरधारी लाल	-	सदस्य
डॉ. शैलजा सिंह	-	सदस्या
श्री. वी. भट्टलवार	-	सदस्य
प्रभारी मरम्मत अनुभाग	-	सदस्य
प्रभारी उपकरण अनुभाग	-	सदस्य
श्री. ए. डी. पाटील	-	सदस्य
श्री. के. आर. प्रसाद	-	सदस्य
श्रीमती. स्मिता खडकीकर	-	सदस्या

मॅजिकल स्क्वेअर (जादुई चौकोर)

टोटल कहीं से भी कीजिए खड़ा, आड़ा, डायगोनल, सभी तरफ से वही आएगा।

टोटल= **15**

8	1	6
3	5	7
4	9	2

टोटल= **65**

17	24	1	8	15
23	5	7	14	16
4	6	13	20	22
10	12	19	21	3
11	18	25	2	9

टोटल= **175**

30	31	48	1	10	19	28
38	47	7	9	18	27	29
46	6	8	17	26	35	37
5	14	16	25	34	36	45
13	15	24	33	42	44	4
21	23	32	41	43	3	12
22	31	40	49	2	11	20

श्री. एस. आय. सिदंगी
तकनीकी अधिकारी ग (मरम्मत)

पहेलियाँ (बुझों तो जाने)

1. नकली पैसों की खोज

प्रश्न- राजू को बारह सिक्के दिए गए, उसमें से ग्यारह असली है और एक नकली है। भारानुसार नकली सिक्कों का वजन कम है। तराजू का केवल तीन बार उपयोग कर राजू को उस नकली सिक्के की खोज करनी है। आपको राजू की मदद करनी है।

उत्तर- राजू को उन सिक्कों को बराबर दो भागों में बाँटकर तौलना चाहिए जो पलड़ा झुकेगा या हल्का होगा उसमें नकली सिक्का होगा। यही क्रिया तराजू का दूसरी बार उपयोग कर दोहरानी होगी। अंत में सिर्फ तीन सिक्के रह जाऐंगे जिसमें दो भारी और एक हल्का होगा। तीसरी बार तराजू में एक-एक सिक्का रखना होगा अगर तराजू संतुलित हो तो तीसरा सिक्का नकली है अथवा हल्के पलड़े का सिक्का नकली है।

2. कच्चे अण्डे

प्रश्न- राजू के पास दो अण्डे हैं, उनमें से एक अण्डा कच्चा और दूसरा उबला हुआ हैं। अण्डे को बिना तोड़े राजू को पता करना है कि कौन सा अण्डा कच्चा है और कौनसा उबला हुआ है?

उत्तर- राजू को किसी भी एक अण्डे को घुमा कर देखना चाहिए और घुमते अण्डे पर ऊँगली रखनी चाहिए। अगर अण्डा घुमते हुए रूक गया तो वह उबला है, अन्यथा कच्चा होगा, क्योंकि कच्चे अण्डे में द्रव्य होता है जो घूर्णन के समय जड़त्व उत्पन्न करता है और अण्डा घूमते हुए नहीं रूक पाता है। इस प्रकार अण्डों की पहचान कर सकते हैं।

3. दोषपूर्ण उपकरण

प्रश्न- एक टेनिस गेंद उत्पादक उद्योग में दस उपकरण है जिसमें से एक दोषपूर्ण है। इस एक उपकरण द्वारा हल्के गेंद उत्पादित होते हैं। तराजू का केवल एक बार उपयोग कर दोषपूर्ण उपकरण की पहचान करें।

उत्तर- वचन से पूर्ण प्रत्येक उपकरणों को क्रमांक देकर उसमें से क्रम संख्या के बराबर ही गेंद प्राप्त करना है। इस प्रकार गेंदों की संख्या 55 होगी। अगर सही गेंदों का वजन 'x' माने तो कुल भार 55xहोगा। मान लो सही व दोषपूर्ण गेंदों के भारों का अंतर y है तो उपकरणों से क्रमानुसार संख्या में उत्पादित गेंदों की संख्या होगी- प्रथम उपकरण द्वारा y, द्वितीय 2y, तृतीय 3y आदि। माना कि, उपकरण 7 दोषपूर्ण है तो, 55 गेंदों को तौलने के बाद कुल वजन 55x-7y होगा न कि 55x।

4. चोबीस का राज़

प्रश्न- 8, 8, 3, 3 अंको का उपयोग कर 24 अंक प्राप्त करो। इसके लिए जोड़, घटाना, गुणा, भाग का उपयोग करें।

उत्तर- 8÷(3-(8÷3))=24

इसे प्राप्त करने के कई तरीकें हैं पर यह सबसे आसान तरीका है।

5.आबंटक की विड़ंबना

प्रश्न- एक जिले में एक हजार घर हैं। प्रत्येक घर को क्रमांक देना है। (Sign marker) आबंटक को बताइए कि उसे कितने शून्य लगेंगे।

उत्तर- आबंटक को एक सौ बयानवे शून्य लगेंगे।

कारण- एक हजार क्रमांकों को सौ-सौ के समूह में बाटेंगे -(1-100), (101-200)...(901-1000)

इस प्रकार, प्रथम समुह में 11, द्वितीय से नौवे समुह में बीस व दशम में इक्कीस शून्य लगेंगे।

अतः 11+8×20+21 = 192

मिल्सी मोल जे. पी
प्रयोगशाला क्र. 9 (नई बिल्डींग)

क्रीड़ा सप्ताह- 2013

'विज्ञान सीखना मज़ा है!'
- श्री. अरविन्द गुप्ता, आयुका विज्ञान केन्द्र, पुणे द्वारा व्याख्यान, 9 फरवरी, 2013

नोबेल पुरस्कार विजेता डॉ. जूल्स होफमन एनसीसीएस मे छात्रोंसे बातचीत करते समय, अक्तूबर 2012

'समझ कीट समाजसे'
- डॉ.राघवेंद्र गदगकर, आईआईएससी, बेंगलूर, 8 मार्च, 2013

प्रा. जिम स्मिथ, निदेशक, एमआरसी राष्ट्रीय चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, लंदन, ग्रेटब्रिटेन, की एनसीसीएस को भेंट 2013

विज्ञान दिवस-28 फरवरी, 2013
छात्र परिचर्चा - 'भारत को किसे प्रोत्साहित करना चाहिए - सर्वशिक्षा अभियान या अंतरिक्ष अन्वेषण?'

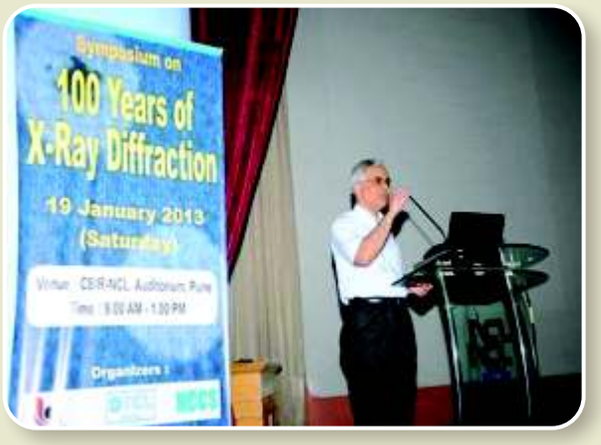

क्ष-किरण विवर्तन के सौ साल- डॉ. शेखर मांडे

अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा

युरोपीयन संघ के प्रतिनिधियों की
एनसीसीएस भेंट 17 सितम्बर, 2012

आरएमआयटी विश्वविद्यालय, ऑस्ट्रेलिया
के प्रतिनिधियों का एनसीसीएस दौरा
24 जनवरी, 2012

क्यूयूटी, ब्रिस्बेन ऑस्ट्रेलिया के साथ
सहमति ज्ञापन का आदान प्रदान, 12 मार्च 2012

डॉ. गोपाल कुंडू का
नैशनल इनोवेशन फाउंडेशन द्वारा
'पार्टनरशिप अवार्ड' से सम्मान, 2013

डॉ. देबाशिष मित्रा का 'ओपीपीआय वैज्ञानिक पुरस्कार' और 'वाई. टी. तथाचारी'
पुरस्कार से सम्मान 2011-2012

वार्षिक रिट्रीट, अगस्त, 2012 (जाधवगढ़ किला)

डॉ. जयंत नारळीकर की एमसीसी को भेंट

सूक्ष्मजीवो पर संगोष्ठी: आण्विक परिस्थितिविज्ञान और वर्गीकरण सितम्बर, 2012

डॉ. यु.वी. वाय के हाथों कोशिकाआधान के नए भवन का उद्घाटन, 2012

डॉ. जी. सी. मिश्र के हाथों नए छात्रावास का उद्घाटन 2012

कर्करोग सूचनाविज्ञान: माइक्रोएरे डाटा का विश्लेषण और सूचनाविज्ञान, निर्देशन एवं लघु परिसंवाद, 2012

श्रीमती. सॅण्ड्रा फर्नांडिस का हिन्दी आशुलिपि परीक्षा में राष्ट्रीय स्तर पर प्रथम आने पर सम्मान।

संसदीय राजभाषा समिति

माननीय संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उप समिति द्वारा संस्था का राजभाषा प्रयोग संबंधी निरीक्षण, 6 नवम्बर, 2012

रज़त जयंती समारोह

रज़त जयंती समारोह के अवसर पर
प्रा. आनंद मोहन चक्रबर्ती का व्याख्यान, 29 जुलाई, 2013

आरेखन और मुद्रण : यूनायटेड मल्टिकलर प्रिंटर्स प्रा. लि., 264/4, शनिवार पेठ, पुणे 411 030
ईमेल: unitedprinters@rediffmail.com

राष्ट्रीय कोशिका विज्ञान केन्द्र, पुणे 411 007